व्यसनों के पार



उपाध्याय गुप्तिसागर

व्यसनों के पार

उपाध्याय गुप्तिसागर मुनि



उपाध्याय गुप्तिसागर साहित्य संस्थान,

इन्दौर (म.प्र.)

व्यसनो के पार: जीवन

उपाध्याय गुप्तिसागर मुनि

सम्पादक सिद्धान्तरत्न ब्र सुमन शास्त्री

प्रथम सस्करण १९९४

द्वितीय सस्करण १९९६

सौजन्य

सुरेन्द्र कुमार, रवीन्द्र कुमार जैन
विज्ञान विहार, दिल्ली-९२

प्रसग

व्यसन मुक्ति सम्मेलन,
भजनपुरा, दिल्ली

मूल्य दस रुपए

प्रकाशक उपाध्याय गुप्तिसागर साहित्य संस्थान

२१५, कालानीनगर, इन्दौर (म प्र)

दो शब्द

उपाध्याय मुनिश्री गुप्तिसागरजी एक ऐसे मनीषी संत पुरुष है, जो भारतीय जन-जीवन की गुणवत्ता के सरक्षण और उसके पुनःस्थितिकरण की प्रक्रिया मे लगातार साधनारत है। वे जैन श्रमण है। उनका अपना स्वाधीन/सयत/मर्यादित जीवन है। इन सीमाओ/सरहद्दियो के होते हुए भी वे चाहते है कि आज का आदमी विकृतियो से बचे, उन बुराइयो से, जो उसे उसके नैसर्गिक जीवन से वचित करती है और उसे मूल लक्ष्य से भटकाती है, अत वे अपने प्रवचनो, मगल-विहारो और अपनी जीवन को नवोत्थान देने वाली बहुमूल्य कृतियो मे सतत् एक ऐसी ज्योति प्रज्वलित रखते हैं, जो समाज के जीवन को निर्दोष और निष्कलुष बनाती है, उसे माँजती है, उसे जगमगाती है। चूँकि वे जानते है कि किसी भी राष्ट्र या समाज की असली दौलत रुपया-पैसा, चाँदी-सोना, हीरा-मोती, भव्य भवन इत्यादि नही है, बल्कि एक व्यसन-मुक्त उत्तरदायी नागरिक है, अत उन्होने अपने जीवन का एक-एक पल राष्ट्र को व्यसन-मुक्ति की ओर ले जाने मे बिताया है। वस्तुत वे **तमसो मा ज्योतिर्गमय** को पल-पल जीने वाले तरुण तपस्वी सन्त हैं, और इसीलिए अँधेरो मे जी/चल रहे नौजवानो को सही राह दिखाने मे कामयाब है।

(आज हमारा जन-जीवन व्यसनो का खतरनाक अखाडा बना हुआ है। हम अनेक अन्तर्विरोधो और असगतियो के बीच बुरी तरह कराह रहे है। शराब ने हमारे अर्थतन्त्र की कमर तोड दी है।) गर्भपात, दहेज, भ्रूण-हत्याओ और आत्मघातो ने हमारे गार्हस्थिक जीवन के सहज लालित्य को चिन्दा-चिन्दा कर दिया है। हमारी पारिवारिक शोभा-श्री लगभग मृतप्राय है। हममे जो एक सास्कृतिक/नैतिक झिझक थी, वह लुप्त होने लगी है। (हम बुराइयो के शिकजे मे बुरी तरह जकड गये है। मासाहार ने हमारे खान-पान और रहन-सहन को चौपट कर दिया है। कत्लखानो-का-जाल इस कदर बिछ गया है कि हमारा सामाजिक जीवन हिसा-हत्या-क्रूरता-बर्बरता के तूफान मे अन्तिम साँस लेने पर विवश है। जुआखोरी ने अनेक बदशक्लो मे हमारे नैतिक मेरुदण्ड को निष्प्राण-निष्क्रिय कर दिया है। उसने हमारे सास्कृतिक ढाँचे (इन्फ्रास्ट्रक्चर) की

बुनियाद खिसका दी है। यह सब हमारा दुर्भाग्य है, जिससे जूझे बगैर अब कोई रास्ता नही है। इन चुनौतियो और विषमताओ के बीच 'व्यसनो के पार' का प्रकाशन एक ऐसी मशाल है, जो हमारी आगामी पीढी को उजाला देगी, उसके जीवन मे प्रकाशस्तम्भ का काम करेगी।

अहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे उदात्त जीवन-मूल्य अब सिर्फ खोखले/निस्तेज शब्द रह गये है। इनमे जो निर्मल चरित्र आभायित था, वह अब चिराग ले कर ढूंढने पर भी उपलब्ध नही है। अमल मे, कोई शब्द निपट शब्द ही नहीं होता, उसमे जो जीवन्तता बनती है, वह मनुष्य के उज्ज्वल/बेदाग आचरण मे-से आती है। उपाध्यायश्री ने प्रयत्न किया है कि इन शब्दो को भारतीय समाज मे पुनरुज्जीवित करे और भारत को फिर से भारत के रूप मे प्रतिष्ठित किया जाए। आज भारत वह भारत नही है, जो भगवान् आदिनाथ के युग मे था। उसका सास्कृतिक नूर उतर गया है। माना, सदर्भ बदले है, किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नही है कि हमारी मौलिक सरचना ही बदल जाए। हिसा, असत्य, चोरी कुशील/व्यभिचार/बलात्कार/आतमघात और अनधिकृत/अतिरिक्त/अनावश्यक द्रव्य-सचय ने हमारे सामाजिक/साम्कृतिक जीवन का फीका-फस्स कर दिया है। उपाध्यायश्री की प्रस्तुत कृति उसकी तेजोमयता की वापसी का एक अविस्मरणीय पुरुषार्थ है।

आज ऐसे विषम/विषम्भर क्षणो मे जब कि मनुष्य से उसकी मनुष्यता छीनने की घिनौनी साजिशे वातावरण को भयावह और विषाक्त किये हुए है, उसे सास्कृतिक गौरव-गरिमा तथा उदात्त जीवन-मूल्यों से खाली करने की होड लगाये हुए है, 'व्यसनो के पार' जैसी कृतियों का पलक-पॉवडे बिछा कर स्वागत किया जाना चाहिये ताकि मरणासन्न नैतिकता की सॉस लौटे और चारो ओर विकास की उर्वर सभावनाएँ उन्मुक्त हो।

मुझे विश्वास है यह किताब, जिसमे आठ जीवनोन्नायक लेख है, भारतीय लोक-जीवन के निर्मलीकरण और उन्नयन मे मील-का-पत्थर सिद्ध होगी तथा आने वाली पीढियो के लिए एक अप्रतिम/अखण्ड ज्योतिर्मती मशाल का काम करेगी।

इन्दौर वसन्त पचमी १९९६ **—डॉ. नेमीचन्द**

सपादक 'शाकाहार-क्रान्ति'

व्यसनों के पार : एक आईना

एक सफेद चादर टगी थी। उसके एक कोने पर एक काला दाग लगा था, जो उस चादर के क्षेत्रफल के अनुपात मे ००१ भी नही था। जिसको भी वह चादर दिखलाई गई, उसकी दृष्टि उस चादर के ९९ ९९९ प्रतिशत सफेद भाग पर नही पडी, अपितु उस काले ० ००१ प्रतिशत वाले भाग पर पडी।

व्यसन भी कुछ इसी प्रकार, इन दोष-ग्राही ऑखो को अपनी ओर आकर्षित करते है। जब ० ००१ मे इतना आकर्षण है, तो उससे ज्यादा प्रतिशत होने पर कितना आकर्षण होगा? इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

व्यसनो से मुक्ति प्राप्त करने के लिए हमे स्वय ही प्रयत्न करना होगा। कोई हमारे लिए कुछ कर नही सकता है। और अगर कुछ किया जा सकता है, तो केवल इतना कि हमे कोई यह बता दे कि किस व्यसन का क्या प्रभाव पडेगा? उससे जीवन कितना अशान्त हो जायेगा?? मानसिक शान्ति कैसे लुप्त हो जायेगी??? जीवन की धरा पर विषाक्त मेघो की वर्षा के कारण आचरण का आधार किस प्रकार बदबूदार दल-दल मे परिणत हो जायेगा, मानवता की स्नेह-सिक्त सवेदना किस प्रकार कुठित हो जायेगी। स्नेह की सतत-प्रवाहित होने वाली सरिता का वेग किस प्रकार अवरुद्ध हो जायेगा? विकास का पथ किस प्रकार की भूल भुलैया मे खो जायेगा, और हम कब तक खून के ऑसू पीते रहेगे?

इन तमाम प्रश्नो का स्वच्छ समाधान पाने के लिए उपाध्याय श्री गुप्तिसागर जी ने एक ऐसा ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होने व्यसनो के पार के रूप मे एक आईना पकडा दिया है हम सभी को ताकि हम उसमे अपने आपको देख सके, पहचान सके, जान सके मान सके, और अपनी बुराईयो को धोकर अपना जीवन सुधार सक।

जिसने सब कुछ त्याग दिया है, जिसके पास 'कुछ' भी नही है, वह 'कितना कुछ' दे रहा है यह उपाध्याय श्री की पुस्तक को पढने के बाद स्वत ज्ञात हो जाता है। जबकि आज के भौतिक युग मे तो जिसके पास जितना ज्यादा है, वह उतना ही दरिद्र है, उतना ही याचक है, उतना ही भिखारी है, उतना ही अशान्त है।

मानव कल्याण के मार्ग के कटको-द्यूत, मादक द्रव्य, हिसा, मासाहार, स्तेय, वेश्यागमन एव परस्त्रीगमन-का परिचय, उनकी प्रचलित परिभाषा, प्रयोग, उपयोग एव आदतो का परिणाम और शेष–पश्चाताप का वर्णन इन लेखो मे जिस सरलता से किया गया है, वह मननीय है, चिन्तनीय है, अनुकरणीय है। उपाध्याय श्री की मानव सेवा के व्रत का 'पारायण' है यह पुस्तक। इसी प्रकार की अन्य पुस्तके मानव मात्र के कल्याण के लिए, वे निरन्तर लिखते रहे–यही विनय है, प्रार्थना है।

शुभम – भवत् सव्व मगलम्

गुलाब खेतान

- काठमाण्डू (नेपाल)

अनुक्रम

प्रवेश	८
व्यसन के मायने	१३
द्यूत धरा का धवल धोखा	१८
अगूर की बेटी अपरिमित आपदाओ की आमत्रक	२५
मासाहार मनुज का मरघट	४०
अभिसारिका सर्वस्वहारिणी	६२
आखेट हिसा का आधुनिक आयाम	[illegible]
स्तेय महानिषेधो का मारक	[illegible]
परस्त्री प्रेम आपत्तियो का आस्पद	[illegible]

प्रवेश

(इस तथ्य को नकारा नही जा सकता कि व्यसन के काले तूफानी मेघ भारत भूखण्ड पर बहुत लम्बे अरसे से छाते रहे है, शायद जीव के अस्तित्व के साथ से। ये मेघ समय-समय पर मदोत्पादक विषाक्त जल वृष्टि भी करते रहे है। लेकिन २० वी सदी जैसा इनका अजूबा अस्तित्व देखने मे नही आया।) वर्षों पूर्व इग्लैण्ड से भारी समारोह के साथ अग्रेजी बादल आये। कुछ विवेकी चेतनाओ के तूफान ने उन बादलो को दूर खदेड फेका, लेकिन उनका जल बरसकर भारत की वसुन्धरा पर जो दल-दल पैदा कर गया, उस दल-दल मे भारतीय चेतनाओ के पाव काफी गहरे धस गये। इतने कि अब वे अपना धड ही नही खीच पा रहे है। कुछ लोग दुष्परिणामो से वाकिफ होने पर पैर खीचने के लिए काफी श्रम करते है। रास्ता बदलने की भरसक कोशिशे भी करते है किन्तु उनके पार्श्व प्रदेश मे बैठे कुछ स्वार्थी तत्व उन्हे पुन उसी मे घसीट ले जाते है।

निश्चित रूप से यह इस धरा का सौभाग्य है कि जो इस नाजुक दौर मे मानव की कलुषित मनीषा को साफ-सुथरा बनाने के लिए गहन-विशद, किन्तु सहज ही मौलिक चिन्तक उपाध्याय गुप्तिसागर जैसा युवा मनीषी मिला। जिसने मानवता की कराहती रग पर हाथ रखा। व्यसनो मे फसी चेतना को 'व्यसन मुक्त' बनाने के लिए जिनकी उन्मुक्त चेतना मे चिन्तन मुखर हुआ, परिणामत 'व्यसनो के पार' नामक कृति आपके हाथो मे आ रही है। ये आठो ही आलेख आठो याम आपके जीवन को समुन्नत बनाने के लिए सजग प्रहरी है। जीवन से

अधकार का सधि-विच्छेद एव रोशनी से समास कराने की गुणवत्ता से सुसमृद्ध है। उपाध्याय-श्री का अपना अनुभव है कि ऐसे लोग जो व्यसन मुक्त है, वे अधिक शात, कुशल, शालीन होते है। समीचीन दृष्टिकोण से देखते है तो ज्ञात होता है कि मानव जीवन मे जो विस्फोट हुआ है, उसमे व्यसन और व्यसनी काफी हद तक जिम्मेदार है। बुरी आदते जहर से भी अधिक घातक है। (जहर आदमी को एक बार मारता है, किन्तु व्यसन-विष शूल जीवन भर चुभते रहते है। इतना ही नही, जीवन मे हर पल क्रोध, निराशा, दरिद्रता, तनाव और आशका आदि के आघात पर आघात करते ही रहते है।)

कृतिकार सस्कृति के प्रति चिन्तित है-उन्ही के शब्दो मे व्यसन चाहे जुआ का हो या आखेट का, मास सेवन का हो या मधुपान का, चोरी का हो या पर नारी का, पण्यस्त्री का हो या तम्बाकू का, जीवन की उज्जवलता को धूमिल किये बिना नही रहते। ये सस्कृति के दिव्य भाल पर कभी न मिटने वाले कलक हैं। व्यसनी तो मर जाता है किन्तु व्यसन का वीभत्स अमिट चिन्ह छोड जाता है। द्यूत एक जहरीला आकर्षण है, अन्तहीन यात्रा है एव है धवल धरा पर काली स्याही। शराब की बोतल के मादक पानी ने तो मानव की मानवता का पानी ही उतार कर रख दिया। पारिवारिक विघटन एव बर्बादी की तस्वीरे खीचने वाला यदि कोई कैमरा है तो वह है शराब। मुद्रास्फीति ने भारतीय मौलिकताओ की जो धज्जिया उडाई है उसकी क्षति-पूर्ति भारत कभी नही कर पायेगा।)

(वस्तुत ये दुष्प्रवृत्तियॉ नित नये रूपो मे स्वाग रच/बदल आदमी के जीवन द्वार पर दस्तक देती है, और यह इन्सान



अनजाने-अनचाहे अपने द्वार खोल देता है। फिर ये करती है उसका मन चाहा शोषण। इनका आकर्षण चुम्बकीय है, यद्यपि व्यसन और व्यसनी अलग-अलग चरित नायक है, लेकिन जैसे चुम्बक सुई को पहले अपनी ओर खीचता है फिर सुई चुम्बकीय हो स्वय खिची चली आती है। वैसे ही पहले व्यसनी व्यसन के पास जाता है पश्चात व्यसन उसके पास स्वत खिचे चल आते है। अन्तत वह स्थिति भी आ खडी होती है, जब व्यसनी तो मर जाता है किन्तु व्यसन उसकी मूर्खता पर इठलाता, मुस्कुराता खडा रहता है। भौतिक विषमताओ से पीडित मानव समाज परित त्रस्त है।

त्रास से मुक्त, होने के लिए उसे व्यसन मुक्त जीवन की छाव तले आना होगा क्योकि व्यसनो की दाह से दूर खडे मानव ही अत्यन्त शान्त सौम्य चुस्त सावधान, फुर्तीले, अनुद्विग्न एव परिश्रमी होते है। यह अनुभत यथार्थता की पर्त- दर-पर्त खोलता है। आपाधापी का सब ओर घुप्प अधेरा है। जीवन के ऊर्ध्वीकिरण के लिए प्रकाश किरण लिए खडी है प्रस्तुत कृति जिसे पढकर पाठक स्वत ही व्यसन के विषय घेरे से सहज ही निकल सम्यक् मार्ग पा सकता है क्योकि व्यसन कोई लक्ष्मण रेखा नही है जिसे पार न किया जा सके।

प्रस्तुत कृति मे जो विषय विवृत है उसे उपाध्याय श्री ने विशेष शास्त्रीय परिभाषाओ मे परिभाषित ही नही किया, अपितु अपनी अतलग्राही मेधा से घर-घर के उन अनुभवो को हर दृष्टि से प्रस्तुत किया है, जो प्रतिदिन की मर्मस्पर्शी घटनाओ से सम्बन्धित है। आलेखो की विषय वस्तु पाठक को अनायास ही मरूस्थल से मरुद्यान मे ले आती है। विषय प्रस्तुति की कोख मे एक



सहज जीवन दर्शन उष काल की अरूणिमा लिए जीवन के कण-कण को अपूर्व दीप्ति से भरने के लिए कुल बुला रहा है। स्पष्टत चरित्र निष्ठा मे लेखक का अगाध विश्वास है। सैद्धातिक विचार-विमर्श मे किञ्चित् मात्र भी लाग-लपेट या सकोच नही करते। वैचारिक सकीर्णताओ स परे विचारो को खुली अभिव्यक्ति देना उनका स्वभाव है। उनकी वाणी और विचारो मे युग मुखरित होता है। यही कारण है कि आपकी दिव्य देशना से लाखो की सख्या मे लोगो ने मासाहार जैसी दुष्प्रवृत्तियो को छोड सात्त्विक जीवन जीने की शपथ ग्रहण की है।

मेरा अपना चिन्तन है कि धर्म और धर्मगुरू की अपनी सीमाएँ-मर्यादाएं होती है। उन सीमाओ के बन्धन स्वीकारते हुए भी वे जागतिक समस्याओ का समाधान तो दे ही सकते है, ताकि मानव जगत को पथबोध मिले। यदि उनसे समाज को पथबोध न मिले, दिशा बोध न मिले, गतिशील न हो, जीवन को सुसस्कारित करने की प्रेरणा न मिले, तो विषयो मे सुसुप्त चेतना को जागरण का सदेश कौन देगा? उन्हे जगाने का दायित्व कौन निभायेगा? यही कारण था, कि उपाध्याय श्री ने 'आत्मोदय के साथ लोकोदय का , जो रिश्ता अत्यन्त निकट का है, उसे बखूबी से निभाया है।

उपाध्याय श्री की यह आलेखावृत्ति न 'शो केस' मे सजाने के लिए है न ही अन्य पुस्तको के ढेर तले दबाने के लिए, अपितु जीवन की मगल यात्रा किसी पल भी दूषित न हो, अवरूद्ध न हो, अनवरत प्रवाहमान रहे ऐसे गतिशील हाथो के लिए है। उन्ही के लिए सख्यता/भव्यता का मगल कलश लिए खडी है नतशिर स्वागतार्थ प्रतीक्षित ।

कितना सुन्दर सयोग है कि जहॉ से रावण के अनुज-तनुज, कुभकर्ण एव इन्द्रजीत ने चैतन्य की समग्रता को प्राप्त किया, मुक्ति श्री का वरण किया। जहॉ विश्व का सबसे अधिक उत्तुग एव प्राचीन बिम्ब विराजमान है। वही इस कृति का बीजाकुरण हुआ एव पूर्णाकार भी मिल गया। सन् १९९३ का निमाड प्रान्त मे बावनगजा सिद्ध क्षेत्र का यह द्वितीय किन्तु साहित्य सृजन का अद्वितीय वर्षायोग था।

प्रस्तुत कृति की पाण्डुलिपि एव प्रूफ रीडिग मे श्री मोहन जोशी 'पीयूष' ने निष्ठापूर्ण श्रम किया। उन्हे सस्थान की ओर से मेरा साधुवाद। 'गुप्ति वर्धनोत्सव' ४ दिसम्बर १९९४ को जैसे ही यह कृति प्रथम सस्करण के रूप मे सुधी पाठको के हाथो मे पहुँची, इसे मुक्त कण्ठ से सराहा गया। इसकी इतनी मॉग हुई कि छ माह होते-होते सारी प्रतियॉ समाप्त हो गईं। लोगो की बढती जिज्ञासा और मॉग ने द्वितीय सस्करण के लिए प्रेरित किया। कई श्रावको ने आकर कहा महाराज श्री मैने जब से इस पुस्तक को पढा, मेरे जीवन से जुडे, न छूटने वाले व्यसन स्वत छूट गये। उपाध्याय श्री का हृदय रोमाचित हो उठा, चलो मेरा श्रम सार्थक हुआ। परिणामस्वरूप द्वितीय सस्करण की आज्ञा सहज ही मिल गई। हम उनके कृतज्ञ है।

आप जैसे मनीषी ऐसी ही सामयिक एव लोक कल्याणकारी कृतियो का सृजन कर मानव समाज को उपकृत करते रहे। इसी मनोभावना के साथ-साथ अनेकश नमन ! नमन !! नमन !!!

ब्र सुमन शास्त्री



व्यसन के मायने

वह समाज और, राष्ट्र सौभाग्यशाली माना जाता है जिसका नागरिक/ युवा पीढी व्यसन मुक्त है। तो आइये। पहले हम यह समझे कि व्यसन क्या है? जिससे हमे मुक्त होना है। 'यत पुस श्रेयस' व्यस्यति तद् व्यसनम्। जो पुरुष को कल्याण-मार्ग से भ्रष्ट कर दे वह है व्यसन। वह असत् प्रवृत्ति जो मानव को निरन्तर उत्तम से जघन्य की ओर ले जाती है।

प प्रवर आशाधर जी ने व्यसन श ब्द के अशुभ, आसक्ति, अनिष्टफल, विपत्ति, विफल- उद्यम, कर्मफल, भाग्यवश, स्त्री और सम्यक्- आचरण से गिरना आदि पर्याय नाम बतलाये है। व्यसन नाम सकट का भी है, उपर्युक्त शब्दो मे व्यसन से तात्पर्य 'सुचरितात्भ्रशे' अर्थात् सम्यक् आचरण से गिरना। यो तो व्यसन का अर्थ अत्यासक्ति भी है, लेकिन देखिये। अत्यासक्तियॉ एक नही अनेक होती है, यत किसी को पढने की, किसी को श्रवण की, किसी को खाने की, तो किसी को अधिक बोलने की, किन्तु प्रस्तुत प्रसग मे इन अत्यासक्ति रूप व्यसन से प्रयोजन नही है। प्रयोजन है उससे, जो हजारो-हजार विपदाओ को आमत्रण देता है। व्यसन के मायने वह प्रवृत्ति, जो जिन्दगी का रस सोख लेती है। वह ऐसी अमरबेलि है, जो जलाभाव मे भी पनपती

है और अपने आश्रय का करती है सर्व-विनाश। व्यसन जीवन के लिए अभिशाप है, जीवित व्यक्ति की मृत्यु है, और है मानव जीवन पर पडा काला पर्दा।

बर्बादी का साम्राज्य

जब आदमी खुद को लेकर अपने आप मे व्यस्त हो जाता है, तब भाग्य विधाता भी शायद किसी आड मे बैठकर मसूबे बाधता है। कब कितने पकार के कर्जो का पेचीदा हिसाब स्वय के भाग्य विधाता के पक्के खाते मे लिखा देता है, इसकी कोई इयत्ता नही। उसका भाग्य उसके जमा खर्च की तरह हर सख्या को देखकर उसके कारनामो का सूक्ष्मतम न्याय करता है। उसका भाग्य उसे बीच-बीच मे सावधान करता है, किन्तु व्यसनो मे आपाद-कण्ठ आसक्त व्यसनासक्ति के मोटे चीर मे अपना मुँह छिपाये व्यसनी उसकी चेतावनी नही सुन पाते और उतर जाते है, बर्बादी के गहरे गड्ढे में। व्यसन है आदत का बधन, लत का दासत्व और बर्बादी का साम्राज्य।

सचमुच ही व्यसन का पथ चौडा है, और उसका द्वार पथ से भी अधिक चौडा है। यदि कोई अपनी बर्बादी चाहता है तो व्यसन नगर के सदर दरवाजो को ठेलने की जरूरत नही है, वह तो रात्रि-दिन खुला ही रहता है। इस ध्वस्तपुर के सदर दरवाजे पर कोई दरबान भी नियुक्त नही है। जिसे मर्जी हो वह निर्विरोध प्रवेश ले, अपनी पूरी जिन्दगी बर्बादी के हवाले कर सकता है। व्यसन व्यक्ति का हाथ पकड उसे गहन अधकार मे खीच ले जाता है जिसे चीर कर निकलना उसे सभव नही,



क्योकि उसके पैर दलदल म फॅसते ही चले जाते है।

आघात पर आघात

व्यसनग्रस्त मानव, चेतना शून्य-सा हो करणीय-अकरणीय से अपरिचित, अनभिज्ञ, रिक्त हो जाता है। व्यसन व्यक्ति के लिए ही नही, प्रत्युत परिवार, समाज, देश एव सस्कृति के दिव्य भाल पर कभी न मिटने वाला कलक है। एक छोटी सी कुटेव/ दोष मनुष्य के जीवन को नष्ट कर डालता है, फिर जिसकी आदत म अनेक दोष सवार हो, उसका इस धरती पर क्या ठिकाना। बुरी आदते जहर से भी अधिक घातक है। जहर आदमी को एक बार मारता है, लेकिन व्यसन, जीवन मे क्रोध, निराशा, दरिद्रता तनाव, आशका आदि उत्पन्न कर व्यक्ति पर प्रतिपल आघात-पर-आघात करते है। ऑखे तीर का सामना करे और फूटे न, यह कैसे हो सकता है? हाथ तलवार का सामना करे और न कटे, क्या यह सभव है?

व्यसन का प्रकटीकरण

व्यसन की दलदल म फॅसा व्यक्ति आदर्श की ऊँचाई का स्पर्श नही कर सकता। दुर्व्यसनो का प्रश्रय देना पाप्त वरदान का दुरुपयोग है। इससे न मन शात रहता है, न मस्तिष्क सतुलित। भाण्ड/ बर्तन/ पात्र को व्यक्ति जब चाहे तब उल्टा करके धूलि कणो को झाड कर/ स्वच्छ कर सकता है, किंतु दुर्गणो/ दुर्व्यसनो से भरे जीवन के स्वर्ण पात्र को खाली करना वैसा ही है, जैसे कोहनी को मुख मे देना। कोई व्यसनो को छुपाने की लाख कोशिश करे, अपने-आपको व्यसन मुक्त घोषित करे, परन्तु

व्यसन छुप नही सकते। वे जरूर-एक न एक दिन प्रकट हो ही जाते है। क्या कभी झुक-झुक कर ऊँट की चोरी हुई है? क्या कभी आग रुई के ढेर मे दबी/छिपी/रुकी रही है? नही, अपितु विकराल रूप धारण कर प्रकट हुई है/ होती है।

शाति/ सपदा के दाहक

व्यसन आरभिक अवस्था मे रुई मे दबी /ढॅकी आग की तरह धीरे-धीरे सुलग-सुलग कर समूचे जीवन एव शाति, सपदा के उपवन को दग्ध-विदग्ध कर दते है अथवा जीवन मे प्रविष्ट हो जीवन को ठीक वैसे ही वीरान कर देते है, जैसे गृह मे प्रविष्ट कबूतर उसे उजाड देता है। जिस तरह सुई वस्त्र मे छिद्र कर अपने साथ अवनि और अम्बर प्रमाण लबा धागा निकाल ले जाती है, उसी तरह एक व्यसन से बिधा हृदय, अनेक व्यसनो को अपने मे समा लेता है। व्यसन खॉसी की तरह है, जो कभी दबता नही। बीज की तरह मिट्टी से कितना भी ढॅको, मनाक सा वातावरण पा, अकुर बन, गौरव से सिर उठा, बाहर झॉक, अपनी अतर्घटना को अभिव्यक्त कर ही देता है।

जीवन पर्यन्त पश्चाताप

व्यसन वह महामारी है, जिसकी चिकित्सा मे व्यक्ति अपने गहने, बर्तन, कपडे, मकान यहॉ तक कि अपनी प्रिया का सुहाग चिह्न मगल-सूत्र का विक्रय कर दाने-दाने के लिये मुहताज हो मारा-मारा फिरता है। जो व्यसन रेखा के नीचे का जीवन बिताते है, उनके सामन रोटी-कपडे का प्रश्न हर घडी मुँह बाये खडा रहता है, क्योकि जितने धन से एक व्यसन का निर्वाह होता है,

उतने से दो बच्चो का भरण-पोषण सहज ही हो जाता है। व्यसन की दीवानगी की उम्र कुछ ही क्षणो की होती है, लेकिन पछतावा ता उम्र। किन्ही गुलामो का ऐसा दलन नही होता, जैसा व्यसन गुलामो का। आश्चर्य है! इतना सब कुछ जानते हुए, व्यक्ति अपने प्राण, सदेह रूप व्यसन तराजू पर क्यो चढा देता है? व्यसन और वह भी अशुद्धता का, चिकनी चीज का, जिसमे वह चिपट जाता है, लिपट जाता है। कफ मे पडी मक्खी की तरह उसी मे प्राण खो बैठता है। कितनी मूर्खता! सूक्ष्म तार द्वारा वज्र का बधन बनाता है, मकडी के जाले गूँथकर कैद खाने की दीवार बॉधना चाहता है। शायद नही जानता, व्यसन एक ऐसा स्वच्छद रथ है जिसमे मुक्त और निर्बन्ध कल्पनाओ/ आशाओ के वेगगामी अश्व जुते है, जो उन्हे बियावान दु खाटवी मे निराश-नितान्त अकेला पटक देते है।

व्यसनी मर जाता है, किन्तु व्यसन का वीभत्स अमिट चिन्ह छोड जाता है। व्यसन, दारिद्रय का डेरा और है मन की अधेरी-सूनी-रात। सज्जन पुरुषो के समस्त व्रत-विधानादि गुणो की उत्कृष्ट प्रतिष्ठा व्यसनो के परित्याग पर ही निर्भर है, क्योकि जिस प्रकार समीर धूलि-कणो को उडा ले जाती है, उसी प्रकार व्यसन-वायु, धन, व्रत, प्रतिष्ठा को उडा ले जाती है और व्यसनी के हाथ शेष बचता है केवल व्यसन। व्यसन! व्यसन!! व्यसन!!! जैसे जल स्रोतो से जल निकलता है, वैसे व्यसन बीज से प्रादुर्भूत होते है, केवल विषैले फल व्यसन[१]! व्यसन[२]!! व्यसन[३]!!!

■

---

१ कुटेव/दोष, २ अतृप्त/ आसक्ति, ३ सकट



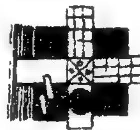


द्यूत् : धरा का धवल धोखा

सर्वानर्थ प्रथम, .मथन शौचस्य सदा मायाया।

दूरात्परिहरणाय, चौर्यासत्यास्पद द्यूतम्।।

जुआ सप्त व्यसनो मे प्रथम सम्पूर्ण अनर्थो का मुखिया, सतोष का नाशक, मायाचार का कुलगृह, चोरी एव असत्य का आस्पद है. दूर से त्याज्य है, क्योकि शेष छ व्यसन इसी से प्रादुर्भूत होते है।



एक भिक्षुक था, उसे मास खाते देख किसी ने साश्चर्य पूछा- भिक्षो! तुम मास का सेवन करते हो? भिक्षु ने कहा- मद्य के बिना मास का क्या महत्व, इन दोनो का चोली-दामन जैसा सबध है। उसने पुन पूछा तो आपको मद्य भी प्रिय है। भिक्षु ने कहा- हॉ, वेश्याओ के साथ। विस्फारित नेत्रो से प्रश्नकर्ता ने कहा- अरे! वेश्या तो लक्ष्मीप्रिय होती है, फिर तुम्हारे पास लक्ष्मी कहॉ से आती है? भिक्षु ने कहा- जुआ अथवा चोरी से। प्रश्न चिह्न लगाते हुए उसने अपनी दृष्टि भिक्षु के रूखे बाल भरे चेहरे पर गडा दी, वह जानना चाहता था। क्या आप जुआ भी खेलते है? भिक्षु त्वरित समझ गया, बोला- हॉ बधु! जुआ मेरा प्रिय खेल है। प्रश्नकर्ता

ने माथा धुन लिया। और बोला सत्य है-

नानानर्थकर द्यूत भोक्तव्य शीलशालिना।
शील हि नाश्यते तेन गरलोनैव जीवितम्।।

शीलवान पुरुष को नाना अनर्थ करने वाले द्यूत का त्याग कर देना चाहिए, क्योकि जैसे विषपान से जीवन नष्ट हो जाता है, वैसे ही जुआ से शील।

मकडी का जाल

देवानुप्रिय! ऐसे भी लोग देखे हैं जिनके घर- मॉ-मृतक पडी है और जुआरी-पुत्र जुआ खेलने मे तन्मय है। देखिए! नष्ट हुए मनुष्य की क्या गति है।

जो एक व्यसन मे गया वह दूसरे व्यसनो मे मकडी के जाल की तरह फॅसता ही चला जाता है। नीति-कथन है-'दुर्णयेषु निखिलेष्वेतद् धुरि स्मर्यते' अर्थात् अखिल व्यसनो मे जुआ गाडी की धुरा के समान मुख्य है।

जहरीला आकर्षण

मनुष्य को जितना अधम जुआ बनाता है, उतना कोई और नही, क्योकि वह मानव की कीर्ति को बट्टा लगाता है, उसका हृदय कुकर्म करने की प्रेरणा पाता है, फलस्वरूप वह चिन्ताग्रस्त मानव न भोजन करता है न रात-दिन नीद लेता है, न ही उसे दुनिया की कोई भी वस्तु अभिप्रेत लगती है। यहॉ तक कि वह

निरन्तर चिन्तातुर रहता है। भारतीय दर्शन मे जुआ सर्वथा निषिद्ध है, भले ही उसमे जीत क्यो न होती हो, किन्तु तुम्हारी वह जीत उस कॉटे के समान है, जिसे मछली निगलने जाती है और स्वय कॉटा उसे मृत्यु का रूप धर निगल जाता है। जो जुआरी सौ हार एक जीतते है, उनके लिये ससार मे उत्कर्षशाली होने की क्या सभावनाएँ हो सकती है? क्वचित- कदाचित् एक हार सौ जीत भी जाते हैं, तो उसकी वह सफलता, असफलता ही है, क्योकि वह जीत उसमे एक मधुर, किन्तु जहरीला आ कर्षण छोड जाती है। जो व्यसन के रूप मे व्यक्ति मे सर्वाग फैल, पल्लवित, पुष्पित हो, विषैले फल देती रहती है।

एक अतहीन यात्रा

जुआरी मे धनार्जन की कोमल, मीठी-मीठी गुदगुदाहट करवटे बदलती रहती है। फलत उसके गर्भ से उत्पन्न होता है-लोभ। लोभ से माया। माया से मान और मान से क्रोध की ओर एक अतहीन यात्रा प्रारभ हो जाती है, जो व्यक्ति को सपरिवार व्यसनो (कष्टो) की बियावान अटवी मे घसीट ले जाती है। देवानुप्रिय! जो अमूल्य समय द्यूत शाला मे बिता/ नष्ट करते है, तो क्या उनकी पैतृक सम्पत्ति समाप्त नही होगी? क्या उनकी मान/प्रतिष्ठा लड़खडाएगी नही?

ज्ञातव्य है धर्म सघ के नायक आचार्य अमितगतिजी का सूत्र, वे कहते है कि- कीर्ति, सम्पत्ति, विद्वता, धर्म, सद्बुद्धि, सत्य, शौच, निष्ठा, प्रतिष्ठा, विश्वास, सत्सगति जैसे प्रशस्त गुण जुआरी का वैसे ही साथ छोड देते है, जैसे पत्र-फल विहीन

नीरस पादप का विहग-समूह।

यह सर्व विदित है, जिस प्रदेश में अग्नि प्रज्वलित रहती है उस प्रदेश में वृक्षों की जातियाँ नही होती है। जुआ भी एक हुताशन है, जिसकी भीषण ज्वाला में सर्व धर्म-कर्म होम हो जाते है; वह भाग्यहीन, विफल-उद्यमी हर-एक की आँखो में उपेक्षणीय हो जाता है। तब क्या कभी वह मनुष्य-समाज में सम्मानीय दृष्टि से देखा जायेगा? क्या वह लोगो का विश्वास-पात्र बन सकेगा? क्या वह परिवार का स्नेह-भाजन बन पाएगा? क्या उसका दिलो-दिमाग स्वस्थ्य रह सकेगा? क्या माँ-धरती के वात्सल्यमयी अंक में निश्चिन्त हो, सो सकेगा? क्या उसे धर्म स्पर्शित कर पायेगा? आदि आदि असंख्य प्रश्नो की भीड़ उसके समक्ष-समुपस्थित है। पर वह, खड़ा है- अनिमेष अनुत्तर। वह जानता है कि कभी दूध की प्यास छांछ से नही बुझी।

जन्म-जन्मान्तरों का कष्टदाता

महानुभाव! ऋग्वेद की ऋचाएँ बोलती है- 'अक्षैर्मा दीव्य, कृषय इत कृषस्व। वित्ते रमस्व बहुमन्यामान। अर्थात पासो से मत खेलो, कृषि ही करो, इससे प्राप्त होने वाले धन से बहु सम्मान पूर्वक जिओ। लोक मे अग्नि, विष, चोर और सर्प आदि तो अल्प दुख देते है, किन्तु जुआ जन्म-जन्मान्तरो तक कष्ट/



पीडाऍं दे मनमाना सताता है। द्यूत प्रमुख अक्ष यहॉं उपलक्षण मात्र है, किन्तु केरम, शतरज, ताश, लॉटरी, चौपड, तम्बोला इत्यादि का समावेश जुए के अतर्गत होता है, क्योकि अक्ष पाशादि निक्षिप्त वित्तञ्जय पराजयम् द्यूतम। 'अर्थात् जिस क्रिया अथवा खेल मे अक्ष, पाश आदि डालकर धन की हार-जीत होती है वे सब जुए की श्रेणी मे परिगणित है।

जैन दर्शन मे जुआ

जैन दर्शन मे जुए की बडी सूक्ष्म एव मार्मिक व्याख्या मिलती है, आचार्य कहते है- धन से अनपेक्ष यदि ईर्ष्या, स्पर्धा, हर्ष-आमर्षवश कोई दो पुरुष परस्पर एक दूसरे को जीतना चाहते है, तो उन दोनो का वह कर्म जुआ के अतर्गत ही आता है। फिर चाहे वह शर्त भी क्यो न हो। जुआ मे जुआरी जब दॉव लगाता है तब जीत की ओर 'तीर्थ के कौवे' की भॉंति ताकता है, और जब जीत के बदले हार/ पराजय हाथ लगती है तो निराशा से फटे बैलून की तरह चिपक जाता है।

जुआ-आलस्य, मदाधता, एव निकम्मेपन का नशा है। जुआ से न केवल आत्मा का पतन होता है, बल्कि राष्ट्र और समाज मे भयकर दुराचारो को प्रश्रय देने की सौ-सौ सभावनाओ की कतार आ खडी होती है। जुआ अर्थ भ्रष्ट के साथ-साथ पथ भ्रष्ट भी करता है। सत्य का तो जैसे जनाजा ही उठ जाता है।

व्यसन मुक्ति की दिशा मे प्रवर्त्त श्री क्षेमेन्द्र जी कहते है- कौए मे पवित्रता, सर्प मे सहनशीलता, नपुसक मे धर्म, स्त्री मे कामोपशाति एव जुआरी मे सत्यता न किसी ने कभी देखी है, न ही सुनी।



दुर्गुणो का कूप

जुआ दुर्गुणो का कूप है, उसमे सभी अनर्थो के स्रोत है, जैसे वृक्ष फल देता है, मेघ जल देता है, वैसे ही जुआ सर्व दु ख उत्पन्न करता है। वह एक ऐसी विचित्र घुन है, जो मनुष्य के जीवन की शाति को अनवरत खाता रहता है। जिससे जुआरी प्रतिपल शकित, क्षुब्ध व्यथित एव चितित रहता है,यद्यपि वह जुआ के दोषो/ बुराइयो को जानता है, फिर भी पुन पुन उसी ओर प्रवर्त होता है। अग्नि की उष्णता जानकर भी उसमे प्रवेश करता है। यही जुआरी की सबसे बडी विवशता है।

काली स्याही-धवल भवन

देवानुप्रिय! जुआ केवल खेल या शौक ही नही? वह महाभारत जैसे महायुद्ध का जनक भी है। जुए की हवस मे धर्मराज युधिष्ठिर तक झुलस गये। सपूर्ण राज्य सहित सती द्रोपदी को हार कर बारह वर्ष तक वन-वन भटक अपमान एव कष्टो के घूँट पीते रहे।एक वर्ष का अज्ञातवास जुए का ही दुष्परिणाम था। कलाविद, नीतिज्ञ राजा नल भी द्यूत की लत के कारण अपने विशाल राज्य को खो बैठे, और उन्हे दूसरो का सेवक बनना पडा। सच ही है, शिकस्त-हारा हुआ जुआरी पुनश्च जुआ खेलने के लिये धन प्राप्त करने की चेष्टा मे हिसक बन बैठता है और जीता हुआ जुआरी, मदाध सुरा-सुदरियो के हाथो अपने कीमती जीवन को कौडी के मोल बेच देता है। जो मनुष्य जुआ, धातुवाद आदि से धनार्जन करता है, वह काली स्याही की कूची से भवन को धवल करने की कोशिश करता है।

हॉं, एक बात और जानिए। मद्य-पायी तो मद्यप कहलाता ही है, किन्तु जुआरी का दूसरा नाम भी मद्यप ही है। पढिये। चौकिए मत-'शब्दानामनेकार्थ' नियमानुसार पाशो से खेलने वाले किवा जुए में आसक्त व्यक्ति को मद्यपी कहा है। यह है शब्दो के प्रयोग का वैचित्र्य।

नरक मार्ग का अग्रगामी

जुआ-निन्दा का स्थान है, दुख-दायक, नरक-मार्ग मे अग्रगामी है। कर्मबध की दृष्टि से उसी समय महा अशुभ कर्म का बन्धक है, क्योकि हार-जीत मे लगा उपयोग अपध्यान नामा अनर्थदण्ड है। जो प्रतिपक्षी के विषय मे अनर्थकारक किन-किन विचारो को जन्म नही देता? कहना बडा मुश्किल है। द्यूत कर्म को एक ही व्यसन न समझे चूँकि वह है- सकल पापो का सकेत, कलहक्षेत्र, दारिद्रदानी, अवगुण-निकर/ और और है व्यसन राज। इसलिये कि यदि जुआरी जीत जाता है तो मास, मदिरा, वेश्या, परस्त्री एव पारद्धी जैसे निद्य कर्मों की ओर सहज ही ढुलक जाता है जैसे निम्न स्थान को पा निम्नगा/ जल धारा या कन्दुक/ गेद और यदि हार जाता है, तो हिसा, चोरी, खसोट की ओर कदम बढा देता है जैसे मास-पिण्ड पर बाज, दूध और चूहे पर बिल्ली अस्तु जुए की सधियो मे से झाकता हुआ कोई सा भी दुष्कर्म अस्पर्शित/अनछुआ दिखाई नही देता।

जुआ-रूप-व्यसन और सम्पदा एक साथ नही रह सकते। वे एक दूसरे को वैसे ही देखते है जैसे अश्व, भैसा की ओर। अत भव्य सुखेच्छुओ को चाहिये कि वे जाने जहॉं द्यूत-प्रियता है/कृत्य है। वहॉं लक्ष्मी का निवास नही होता वरन् व्यसनो/ कष्टो का ससार होता है। क्या आप कटकाकीर्ण पथ का चयन करेगे? क्या आप गृह मे आई लक्ष्मी ठुकरायेगे? नही। तो फिर द्यूत जैसी भयानक दुर्घटना से मुख मोडिए और मुक्ति पथ पर बढने के लिये प्रथमत द्यूत दानव से विदा लीजिएगा। ■



अंगूर की बेटी : अपरिमित आपदाओं की आमंत्रक

मादक द्रव्यो मे चाय और तम्बाकू के पश्चात मदिरा का नाम आता है। आखिर यह मदिरा है क्या बला? जो आज इतनी सिर चढी है। क्या यह कोई ईश्वरीय प्रसादी है? जो हर वर्ग/वय के लोगो को अपनी गिरफ्त मे लिये है,''जानना ही हो तो जानिये। मदिरा कोई ईश्वरीय प्रसादी वरदानी नही, बल्कि अभिशाप है। वह कोई जीवनी-सजीवनी नही, कोई विटामिन नही, कोई शक्तिप्रद पेय नही, न ही किसी रोग की औषधि है, किन्तु यह एक ऐसा विष है, जो मौत को समय से पूर्व आमत्रण देता है। मद्यासक्ति एक सर्वव्यापक व्याधि है'' मादकता का अजगर अपनी कुण्डली मे धार्मिक, शारीरिक, नैतिक, सामाजिक, मानसिक, आर्थिक, भौतिक एव राजनैतिक दृष्टिकोणो से प्राणी, वनस्पति और मानव जगत को जकडता चला जा रहा है, और जिसकी जकडन मे बिलख-बिलख रो रही है मानवता।

वश-वृक्ष की जटिल जडो की तरह कभी-कभी न सुलझने वाली यह शराब सभी अनर्थों की जड है। इसका व्युत्पत्यर्थ, शराब, अरबी भाषा का शब्द है, जिसका प्रयोग फारसी और उर्दू भाषा मे भी किया जाता है। अरबी भाषा मे 'शर' शब्द के

बदी, बुराई, उपद्रव और फसाद आदि कई अर्थ है। 'अब' शब्द फारसी भाषा का है। जिसका अर्थ है सस्कृत का समकक्षी अप्। अप् अर्थात पानी। इसे यूँ समझो, ऐसा पानी जो बदी, बुराई, झगडा, फसाद पैदा करे। शराब की बोतल के मादक पानी ने मानव की मानवता का पानी उतार दिया है। सस्कृत मे शराब को मद्य कहते हैं। जो 'मद' को उन्मत्त करने वाला है। इसे शराब, मद्य, मदुप, मधु, सुरा, सोमरस, हालाहल, मैरेय, शीधु, कादम्बरी, इरा, प्रसन्ना, आसव, वारूणी इत्यादि अनेक नामो से लोक जानता है।

मद्यपानः आग के साथ खिलवाड़

पुरातन काल मे सुरा-पान करने की एक राजसी परपरा थी, राजा लोग नित्य सुरापान करते थे। लेकिन हॉ, इतिहास इस बात का गवाह है कि सुरा मात्र तन्दुल/चावल का चूर्ण करके बनाई जाती थी, जो भारी, ग्राही-बल, दुग्ध, पुष्टि, मेद एव कफ की वृद्धि करने वाली होती थी। सूजन, गुल्म, बवासीर, सग्रहणी तथा मूत्र कृच्छ का निवारण करती थी, लेकिन सम्प्रति-सुरा ने रोगो को नही मस्तिष्क को नष्ट किया है/कर रही है। वह रोगो को पुष्ट ही नही, अपितु नये नये रोगो को उत्पन्न भी कर रही है। मद्यपान आग के साथ खिलवाड जैसा है, क्योकि आग सुलगने पर मात्र एक ही मकान जलाकर चुप नही बैठती, अपितु अपने आस-पास के तमाम मकानो को राख कर देती है। मदिराग्नि भी, वही कुछ कर रही है। जिन दृष्टिकोणो से वह वर्जित थी, उन्ही को आज ताडना दे रही है।

मद्य, मास, मधु और नवनीत ये चार महा-विकृतियॉ है। मद्य अनेक पदार्थों को सडाकर तरल/रस के रूप मे निर्मित की जाती है। इसे बहुत से रसज जीवो की योनि कहा जाता है। उसमे तद् वर्ण, तज्जाति के जीव जन्मते-मरते रहते है। मद्य की एक बिदु मे मद्य के रूप, रसधारक असख्य (काउन्टलेस) जीव होते है। यदि ये भ्रमर का रूप धारण कर संचार करे तो समस्त त्रैलोक्य रूप ससार पूरित कर देगे, इसमे सन्देह के कुहासे को कोई अवकाश नही। मद्यपान से असख्य जीव एक साथ काल-कवलित हो जाते है। यह हिसा, अहिसा की हिसा कर देती है। हमारा ब्रह्मपद बुरी तरह घायल हो जाता है। जो आत्मघात जैसे घिनौने कृत्य से बचना चाहते है, उन्हे मद्यपान से बचना आवश्यक ही नही, अनिवार्य शर्त है।

दूसरी बात यह भी है कि शराब अभिमान, भय, ग्लानि, हास्य, अरति, शोक, काम क्रोधादिक न जाने कितने वैकारिक भावो को जन्म देती है। जो कि हिसा के नामान्तर है। वे मद्यपायी मे अपनी प्रत्यक्ष उपस्थिति दे उसके मस्तक पर दस्तक देते ही रहते है।

मद्यपायी : त्रिवर्ग रहित

एक और महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि शराबी इस जन्म मे त्रिवर्ग रहित होता है, न वह धर्म कार्य कर सकता है, न ही यथेच्छ भोग। ऐसा मानव अपवर्ग का मुख दर्शन तो कर ही नही सकता। आगामी भव मे अत्यधिक दु:ख का कारण इस मद्य से यदि विवेकवान मनुष्य स्वय को सुरक्षित नही रख सका, तो

फिर इस लोक मे 'धर्म के निमित्त अपने लिए हितकारक और दूसरा कौन सा कार्य करने योग्य है? मद्यपायी निर्लज्ज हो, वात्सल्य की मूर्ति जननी से काम जैसी कुचेष्टाएँ करने लगता है। इस तरह कुल मिलाकर मदिरा सर्व अनर्थों की जड है, क्योकि मद्य मन को मोहित करती है, मोहित चित्त धर्म-कर्म भूल जाता है। अतत धर्म विस्मृत चित्त निशक हो हिसा-आचरण करने लगता है। यह सर्वमान्य है कि मद्यसेवी की स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है और जिसकी स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है, वह कौन सा पाप नही करेगा? कौन से दुर्वचन बोलने मे उसकी जबान लडखडायेगी/ हिचकेगी? और किस कुपथ पर बढते हुए वह कदमो को रोक सकेगा?

प्रेरक प्रसग

एक बडी मार्मिक और मजेदार बात है। एकपाद नाम से ख्यात एक ब्राह्मण/सन्यासी पोदनपुर की पगडडियो से होकर गगा-स्नानार्थ विध्याटवी देश से गुजरा। इत्तफाक से वह चाण्डाल-यूथ के मध्य पहुँच गया, जो कि यौवन रूप मद्य के आस्वादन से दुगुने हुए मद्यपान से उत्पन्न, उत्कट विलासकत्री, उन्मत्त विलासिनी तरूणियो के साथ मास सहित शराब पी रहा था। सुरापान से जिनकी बुद्धि विकृत/नष्ट हुई थी, ऐसे उन चाण्डालो ने उसे रोककर कहा- तुझे मद्य, मास और सुदरी तीनो मे से एक कार्य अवश्य करना पडेगा, अन्यथा मै तुझे मार डालूँगा। सन्यासी सोचने लगा। स्मृतियो मे एक तिल या सरसो के बराबर मास खाने पर भयानक विपत्तियो का आगमन सुना जाता है। साथ ही प्राणिज/प्राणी अग होने से मास भक्षण से हिसाजन्य

पाप भाजक/पाप-पात्र बनना होगा। वह कुछ ठिठका/रुका सोचने लगा क्या करूँ। यदि चाण्डालिनी के साथ रति-विलास करता हूँ, तो मेरी जाति तो नष्ट होगी ही एव मरण लक्षण वाला प्रायश्चित लेना पडेगा सो अलग। मद्य, अन्न की पीठी, जल, गुड, महुआ, धातकी के फूल आदि से तैयार की जाती है। ये सब विशुद्ध ही है। ऐसा विचार कर म्लेच्छ विद्या के निधि रूप उस सन्यासी ने वह शराब पी ली। अरे शराब क्या पी ली, सारे अनर्थों के बद कपाट खोल दिये। पीते ही नशे के मादक झोके ने मस्तिष्क तन्तु मूर्च्छित कर दिये। स्मरण शक्ति नौ दो ग्यारह। उसकी शारीरिक स्थिति ऐसी हो गई, मानो देह मे कोई पिशाच प्रविष्ट हो गया हो। उसने अगम्य-गमन किया। कुछ क्षणो पश्चात उसका उदर क्षुधा ज्वाला से जलने लगा, तब उसने क्षुधा उपशाति के लिये मास भक्षण भी कर लिया। शराब की इस उफनती स्रोतस्विनी, सुलगती भट्टी ने सन्यासी का सब कुछ तबाह कर दिया।

इतना ही नही, इतिहास साक्ष्य है इस शराब रूप पानी मे यदुपुत्र सहित द्वारिका, अगारक तापस एव पिगल राजा भी बर्बाद हो गये।

सद्ग्रंथो मे निषेध

वराह पुराण मे उल्लेख है- शराब पीने वाला चौबीस अपराधो का अपराधी है। ऐसे व्यक्तियो के हाथ से स्पर्श किया अन्न-जल ग्रहण करने वाला महापाप का हिस्सेदार है। मद्यपायी को जैन दर्शन ने 'जैन' नही स्वीकारा। भागवत् गीता शराबी को ब्राह्मण कहलाने का प्रमाण पत्र नही देती। महर्षि मनु शराब

सेवन को पाप की कोटि मे गिनते है एव इस्लाम ने तो इसे बेहतरीन किस्म की बुराई घोषित किया है। जिसका स्पष्ट उदाहरण इस्लामिक देश यमन मे शराब पीने वालो को फॉसी की सजा का प्रावधान है। जो मद्य पीते है, वे महानिद्रा मे निमग्न है, उनमे और मृतक मे कोई फर्क नही।

हानि ही हानि

शराब स्वयं भी दैहिक कोशिकाओ के लिये कुछ कम नुकसानदेह नही है। इसका सर्वाधिक हानिकारक प्रभाव शरीर के प्रमुख तीन भाग हृदय, फेफडे और मस्तिष्क पर पडता है। मद्यपान से मनुष्य के अग निश्चेष्ट हो जाते है। शराब मे भिगोए फोहे को शरीर के किसी भी अग पर लगातार पन्द्रह-बीस मिनट रगडने पर अग सुन्न पड जाता है। यदि एक चम्मच शराब दो-तीन मिनट मुख मे रहे तो रसनेन्द्रिय रसविहीन। निश्चेष्ट/शून्य हो जाती है। शराब का पाचन तत्र प्रणाली पर बहुत घातक प्रभाव पडता है। पाचन क्रिया मद/शिथिल हो जाती है, एतदर्थ निर्विवाद सिद्ध है, कि शराब किसी भी प्रकार से किसी का भी भोजन नही है।

दो व्यक्तियो को प्रायोगिक तौर पर उपवास कराये गये। एक को उचित मात्रा मे उसकी इच्छानुकूल शराब पिलाई गई साथ ही आवश्यकतानुसार पानी भी दिया गया। वह व्यक्ति पच्चीसवे दिन मर गया। दूसरे को केवल जल पर साठ दिनो तक रखा गया। ज्ञात रहे जैनाचार के पालक जैन श्रावक साठ सत्तर दिनो तक केवल जलोपवास करते है। इससे विदित है

कि शराब मे किसी भी प्रकार का पोषक तत्व नही है। शराब से महत्वपूर्ण अवयव मस्तिष्क बुरी तरह घायल हो जाता है। पागलो के दवाखानो का सर्वेक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि प्रति दस मे से छ पागल बेहद शराब पीने के कारण हुए थे। जिन लोगो को शराब पीने की लत पड जाती है, उनके मूत्रपिण्ड और यकृत सर्वप्रथम बिगडने लगते है, पश्चात अन्य अवयवो की क्रियाएँ रुकने लगती है, और शराबी असमय मे ही पक्षाघात जैसे रोगो का शिकार हो अल्पवय मे ही महाप्रयाण कर जाता है।

मेयोक्लीनिक

एक बार मेयो ने मेयो क्लीनिक की स्थापना इसी निमित्त की थी, क्योकि अमेरिका के धन कुबेरो ने एकत्रित होकर कहा- मरना कोई नही चाहता, अमीर-गरीब सभी दीर्घायु होना चाहते है। प्रत्येक प्राणी अधिक से अधिक जीकर जीवन का आनद लूटना चाहता है, लेकिन क्या कारण है कि धन-वैभव, अखूट सपत्ति होने के बावजूद भी कई/प्राय लोग जवानी मे मौत के शिकार हो जाते है? कितने ही प्रौढावस्था आते ही चल बसते है। उनकी आशाएँ-आकाक्षाएँ अपूर्ण रह जाती है। ऐसा क्यो? स्वास्थ्य एव लबी आयु पाने के लिये हमे क्या करना चाहिये। तब इक्यासी वर्षीय डॉ मेयो आगे बढे और उन्होने 'मेयो क्लब' बनाकर धन इकट्ठा किया। इस क्लब ने देश-विदेश के सौ वर्ष से अधिक आयु वाले भाग्यशाली स्त्री-पुरुषो को अपने पूरे काफिलो सहित पधारने का निमत्रण भेजा। वयोवृद्ध कुशल डॉ ने इस क्लब का सदस्य बन, उन आमत्रित शतायु वालो के जीवन-क्रम का, उनकी दैनिक चर्या का अध्ययन शुरू किया।

उनका शारीरिक परीक्षण किया वे सभी स्वस्थ्य, मस्तमौला पाये गये। साथ ही यह तथ्य भी हाथ लगा कि उनमे साठ प्रतिशत तो शराब छूते भी नही थे, शेष चालीस प्रतिशत प्रसगवशात् मदिरापान करते थे। उन्हे उसका व्यसन नही था। उनकी भी शारीरिक जॉच की गई। निष्कर्ष निकला कि इनकी अपेक्षा साठ प्रतिशत लोगो के यकृत अधिक स्वस्थ्य थे।

शरीर पर कुप्रभाव

जो शतायु जीवन जीना चाहता है, वह अपना जीवन व्यसन मुक्त रखे। शराब पीने से प्रारभ मे यकृत फूलता है और बाद मे सकुचित होकर बिल्कुल छोटा-सा हो जाता है। तब वह अपने आपको कार्य करने मे असमर्थ पाता है। इतना ही नही, शराब से हृदय उत्तेजित होता है। रक्त वाहिनियॉ फूल जाती है। उनमे रक्त भी विशेष मात्रा मे प्रवाहित होने लगता है, जिसका हृदय पर यह कुप्रभाव पडता है कि वह कमजोर हो जाता है। कभी-कभी रक्त वाहिनियो से रक्त तेज रफ्तार से बहने लगता है, तब भोजन का दहन भी उसी तेजी से हो जाता है। जिससे शरीर मे उत्पन्न होती है गर्मी। जो शरीर को प्रदान करती है, क्षणिक उष्मा। अतत परिणाम यह निकलता है कि रक्त वाहिनियॉ फैल जाती है। त्वचा को आकस्मिक उष्ण ऊर्जा मिलती है, पश्चात शरीर ठडा पड जाता है और कॅपकॅपी पैदा हो जाती है।

तन्द्रा, प्रमाद शिरो, वेदना-विरेचन और अधत्व ये सब मद्यपान के प्रदूषण/दुष्परिणाम है। शराब के रक्त कणो मे मिलने से रोग प्रतिकारक क्षमता क्षीण हो जाती है ऑखो मे रक्त उतर आता

है, जिससे शराबी की ऑखे जगली शिकारी भैसे जैसी लाल सुर्ख हो जाती है, ऑखो का तेज कम हो जाता है। इस तरह वारूणी इन्द्रियो के समग्र विकास को रोक, उनमे शिथिलता भरती है। सबसे बडी विचित्रता तो यह है कि वह चेतना का निर्दयता पूर्वक अपहरण करती है। क्या इससे स्पष्ट नही होता कि वारूणी वासना विष से कम नही है? एक बात और मदिरा मनुष्य की कीर्ति, काति, बुद्धि और अनेक सपत्तियो को राजा की दुर्नीति की तरह क्षण मात्र मे विनष्ट कर देती है।

शराब का एक और आघात ज्ञान तत्र पर पडता है। जिससे मस्तिष्क और ज्ञान-ततु उत्तेजित हो जाते है, परिणामस्वरूप थोडी देर मे अकृत्रिम उत्साह का अनुभव होता है, शनै शनै स्मरण शक्ति कुठित हो जाती है। तर्कशक्ति, विवेक-बुद्धि और श्रेष्ठ गुणों का आस्पद ज्ञान-केन्द्र शिथिल हो जाता है, एतावता इन्सान गाफिल हो आत्मनियत्रण खो बैठता है। मानसिक सतुलन बिगडते ही, न बोलने की भाषा बोलने लगता है। शराबी अधिक नशे के झोके मे शरीरिक सतुलन खो बेहोश हो गिर जाता है। इन तमाम दुष्परिणामो के कारण शराबी की उम्र घटने लगती है। यूँ तो मरना सभी को है पर इसान की मौत मरो, श्वान की मौत क्यो मरते हो?

अनेक आपदाओ का आगमन

(चार दीवारो और छत की छाया से मिलकर घर तो बन सकता है किंतु परिवार नही, क्योकि परिवार का जन्म होता है, प्रेमपुट से और प्रेम की शाखा पर ही वह फलता-फूलता



है। परिवार को गगन चुबी इमारत कहेगे, तो घर को श्वान घर। (यहॉ पर लबाई-चौडाई नही, किन्तु उदात्तता आपेक्षित है)। घर मे भौतिक सुख तो मिल सकता है, मिलता ही है, किंतु सुखानुभूति परिवार के बिना दुर्लभ है। मनुष्य शिक्षित हो, या निरा मूढ, स्त्री हो या पुरूष, शहरी हो या ग्रामीण, वह जगन्मान्य पारिवारिक सस्था के महत्व को स्वय समझने लगता है, क्योकि मानव हृदय ही इस सस्था का सस्थापक एव सदस्य है। प्रत्येक परिवार की यह आकाक्षा रहती है कि उसका हर एक सदस्य सुखी एव समृद्ध हो। इसके लिये अपना सतुलन सभालने स्वभावत स्वय दक्ष होता है, किंतु जैसे ही कोई एक सदस्य व्यसन से ग्रसित होता है, वैसे ही पूरे परिवार को अपने आगोश मे जकड लेता है। शराब व्यसन का दायरा सिर्फ पीने वाले तक सीमित नही है, उसके दुष्परिणाम पूरे परिवार को भोगने पडते है। उनका गृह कलह केन्द्र बन जाता है। हरी-भरी परिवार की फुलवारी वीरान हो जाती है। जिस घर मे शराब की बोतल पहुँची, कि वहॉ की सुख-शाति, समृद्धि पश्चिम द्वार से बाहर निकल जाती है, जैसे चद्रादय होते दिनकर। 'प्रवास सर्व लक्ष्मीना सकेत सकलापदाम्'-अनेक आपदाओ के आगमन का सकेत कर व्यसनी की सारी लक्ष्मी प्रवास पर चली जाती है।

बर्बादी की तस्वीर

अखबार की सुर्खियो की सधियो मे से झॉकती हुई जानकारियो से ज्ञात हुआ कि राष्ट्रीय महिला आयोग ने हाल ही मे विभिन्न क्षेत्र राजस्थान, हिमाचल, असम, पजाब और बॉम्बे की महिलाओ से उनकी स्थिति की जानकारी चाही, तो सभी



महिलाओ ने शराब को लेकर अपनी समस्याएँ रखी। उनका कहना है कि शराब ही उनकी परेशानियो की जड है। शराब, शराब नही हमारी सौत है। वह हमसे हमारा पति ही नही, मेहनत की कमाई भी छीन लेती है। हमारे पियक्कड पतियो का नशा हम महिलाओ को पीटकर ही उतरता है। कितनी महिलाओ को आए दिन होने वाली कलह और आर्थिक समस्या से जूझते-जूझते आत्महत्या एव तलाक जैसे घिनौने कृत्य करने के लिये बाध्य होना पडता है। बालक अनुकरण प्रिय होते है, पिता की राह चल, जब वह भी इसके आदी हो जाते है, तब स्थिति को देखकर रोयॉ-रोयॉ रो उठता है। वे निरीह बच्चो की तरह इधर-उधर ठोकरे खाकर अपना जीवन निर्वाह करते है। जब जीवन निर्माता पिता स्वय दिशाहीन भटक रहा हो, तब उन मासूम बच्चो को कौन मार्ग प्रशस्त करे? हर क्षण परिवार पर मातम के बादल मडराये रहते है। इतना ही नही वैधव्य जैसी अभिशापित स्थिति मे धकेलने तक की, यह शराब अपनी अह भूमिका/क्रूर क्रूरता निभाती है। अस्तु, पारिवारिक शाति के लिये हम महिलाये चाहती है कि शराब की गध हमारे शहर से हमेशा-हमेशा के लिये उड जाये।

'नई दुनिया' ७ फरवरी १९९३ की कतरन के अनुसार केरल और मध्यप्रदेश मे हगामा मचा चुकी शराब की टॉफियॉ अब राजस्थान मे भी धडल्ले से बिक रही है। जिन, रम, व्हिस्की, और वोद्का जैसी दुनिया भर मे मशहूर शराबो के नाम पर बिक रही टॉफियो पर हालाकि 'सिर्फ वयस्को के लिये' लिखा हुआ है, लेकिन दुकानो पर जब बच्चे पहुँचते है, तो दुकानदार



अकल सबसे बढिया टॉफी बताकर उन्हे आराम से थमा देते है और परिणाम यह होता है कि जब कोई भी बच्चा इन टॉफियो को ले जाता है, तो पुन दुबारा उसकी माग करता है। यह है नशे की/अविवेक की अतिम स्थिति। ध्यान रखिये! इस व्यसन से अनेक जीवन एव परिवार उजड गये। पारिवारिक विघटन एव बर्बादी की तस्वीर खीचने वाला कोई कैमरा है, तो वह है शराब। जिसके द्वारा दो मिनट की मौज मस्ती मे स्वय अपनी और पूरे परिवार की शाति नष्ट करने की बेवकूफी का चित्र आसानी से खीचा जा सकता है।

मनुष्यता से पशुता की ओर

मद्यपान एक सामाजिक अपराध है, जो जन जीवन को लज्जित कर पतन की राह पर लाने वाला है। समाज सुधारक ज्ञानी सत महात्मा कबीरदास जी कहते है, शराब पीने वाले अपना सर्वस्व नष्ट कर रसातल के हाट मे कष्ट खरीदने चले जाते है। इन्सान मे पशुता को उभारने के साथ धन का दुरुपयोग करने वाला, यदि कोई तत्त्व है तो वह है शराब।

औगुन कहा शराब को, ज्ञानवन्त सुन लेय।
मानुस से पशुता करे, द्रव्य गाठ का लेय।।

मानव शराब पीकर मदमस्त हाथी की तरह हो जाता है। मानसिक संतुलन खो बैठता है और उतारू हो जाता है अश्लीलता पर, जो कि समाज के लिये अभिशाप है, सुंदर आदर्श समाज के पतन का द्योतक है। कुत्सित भावना का उत्तेजक तत्व है। आज प्रत्येक



समाज मे चारो ओर शैतानियत, लूट, अपहरण, बलात्कार और अव्यवस्था देखने/सुनने को मिलती है, वह सब मदिरा रानी/लाल परी की कृपा से।

सर्वेक्षण करने वाली सस्थाओ ने जब शराब पर शोध कार्य आरभ किया, तब समाज शास्त्रियो ने अपने ढग से सर्वेक्षण किया और शराब पीना एक सामाजिक बुराई है' यह नारा दिया। क्योकि चोर से बढकर गुनाहगार शराबी है। चोर तो केवल वस्तुओ को ही चुराता है, किन्तु शराबी अपनी, पडौसी और समाज की मर्यादाओ को आहत/आह्वत करता है। जिस समाज मे मद्यपान जैसी महाविकृति उपस्थित है, वह मुर्दा समाज है।

नैतिक पक्षाघात

व्यक्ति के नैतिक पक्षाघात का प्रमुख कारण शराब है। बडी-बडी हस्तियॉ इस शराब के प्याले मे डूब कर नष्ट हो गई। यह शराब की शीशी मानव की मानवता निगलने मुॅह फाडे खडी है। उसने शहशाहो की शाही को समाप्त कर दिया। सम्राट, सामतो की तबाही कर, उन्हे चारित्र भ्रष्ट कर, उनके उज्जवल यश पर काली स्याही फेर दी। क्योकि नशे मे गाफिल शराबी को मॉ, बहिन बेटी का भी भान नही रहता। हॉ-हॉ देखिए। सम्प्रति मे एक चौकाने वाली सशक्त सुर्खी मद्य के नशे मे साठ वर्षीय अधेड उम्र के बाप ने अपनी साढे तीन वर्षीय बेटी के साथ बलात्कार किया, यह है नैतिकता का चरम पतन। ऐसी एक नही सैकडो खबरे अखबारो मे छपती रहती है। शराबी, लोक-मर्यादा का उल्लघन कर बेसुध हो मतवाला, गलियो मे लोटता-

गिरता रहता है और चौराहों-चौराहो पर उन्मत्त हो नाचता है। उसका शरीर कुत्ते जिव्हा से चाटते है, यहॉ तक कि मल-मूत्र तक शराबी के ऊपर कर देते है, और वह मूर्ख उनका स्वाद लेकर कहता है, कि अहा । कितना मधुर है।

सुना है एक दफा डॉ डी सी पाठक (अस्थि रोग विशेषज्ञ) ने विपुल मात्रा मे विभिन्न प्रकार के मद्य जिसे 'काकटेल' कहते है, का सेवन किया। जिससे हुआ यह कि वे अपने आपको लगभग भूल ही गये और मार्ग मे चलते वक्त एक पग कही गिरता तो दूसरा कही। सयोगवश हल्की-सी शीतल बयार और बह गई, फिर क्या कहना, मिस्टर पाठक गटर किनारे पडे दिखे मुँह खोले। सामने से एक श्वान चला आ रहा था, उसे मूत्र विसर्जन करने की इच्छा हुई, जैसे कि श्वान की प्रकृति है, उच्च स्थान पर मूत्र छोडना-के अनुसार गटर किनारे उच्च प्रदेश पर उपरि-मुख खोले मूर्च्छित मानव को देख उसके मुख मे मूत्र की पिचकारी छोड दी। स्वाद लेते ही मद्यप बोल उठा, पिलाओ मेरे मित्र। और पिलाओ। ऐसी तो मैने आज तक नही पी, जरा और पिलाओ, पिलाते ही जाओ, बडी मधुर है। यह है आज के सुशिक्षित 'अगूर की बेटी' के शौकीनो की स्थिति।

नैतिक पतन के सदर्भ मे मार्शल पेराम का कहना था कि फ्रास की सेना का नैतिक पतन शराब के कारण हुआ। शराब के नशे मे धुत रहने वाले लोग इसान की रूह मे पशु से भी गई बीती जिदगी बसर कर रहे है।

मिलावटी/विषैली शराब

आज देखा जा रहा है गाव के अशिक्षित आदिवासी गुड,

महुआ और जौ की शराब बनाकर पीते है, जब वह असर नही करती, तब वे शराब मे यूरिया खाद मिला कर उसका पान करते है जो अत्यधिक विषैली हो जाती है, और सुबह समाचार पत्रो मे बड़े-बडे अक्षरो मे पढने को मिलता है। 'जहरीली शराब ने कहर ढाया।' शराब पीने से अनेक मौते। 'मिलावटी शराब ने तबाही मचाई।' शराब के कारण कई परिवार बेसहारा हुए। इतना सब कुछ होते हुए भी सरकार इस दिशा मे खुलकर प्रचार कर रही है, कि बनाओ और पियो।

भारत के किसी जमाने मे वाममार्गी नामक सप्रदाय उत्पन्न हुआ, जो इतना लोकप्रिय हुआ, कि इसे लोकायत कहा जाने लगा। इसका सिद्धात था–

'पीत्वा पीत्वा पुन पीत्वा, यावत्पतति भूतले।
पुनरुत्थान वै पीत्वा, पुनर्जन्म न विद्यते।।'

अर्थात पियो, पियो और खूब पियो, तथा तब तक पीते रहो, जब तक जमीन पर गिर न पडो, फिर जब उठो, तब पुन पीने लगो, क्योंकि पुनर्जन्म नही होता। किन्तु याद रखिये। शराब पीना तो बुरा है ही, किन्तु उससे अधिक बुरा है शराब पीने के लिए किसी को बाध्य करना।

बहुमुखी पतन का खुला द्वार

शराब को राष्ट्रीय मान्यता/प्रोत्साहन मिलना देश का दुर्भाग्य है, और है नागरिक के साथ क्रूर खिलवाड। यूँ तो शराब हमेशा गरीब की गरीबी और अमीर की विलासिता के साथ रही है, लेकिन आज शराब आधुनिकता का माध्यम तथा राजस्व वृद्धि का प्रमुख साधन बन कर आदर पा रही है।



(गजब की बात तो यह है कि वर्तमान मे खादी पहनने वाले गांधीवादी लोग भी सुरापान करते है। तीन वर्ष पूर्व हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार इस मुल्क के लोग बारह हजार करोड रुपये की शराब गटक गये। इसमे से तीन हजार करोड रुपये तो सीधे-सीधे आबकारी टैक्स के रूप मे राज्य सरकारो के खजाने मे गये। अब तो यह आय चार हजार करोड प्रति वर्ष तक पहुँच चुकी है जो स्वतत्रता से पूर्व पचास करोड रुपये वार्षिक से भी कम थी। इसका मतलब यह हुआ, कि इस आय मे अस्सी गुना से भी अधिक वृद्धि हुई है और हो रही है। शराब जैसी बुरी आय से लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियो का सचालन करना कुतर्क पूर्ण तथ्य है। सरकार यह नही जानती कि शराब जैसे कुकृत्य से जितनी आय होती है, उससे अधिक व्यय शराब से उत्पन्न अपराध नियत्रण मे हो जाता है, क्योकि शराब जैसा मस्तिष्क को विकृत और असतुलित बनाने वाला कोई दूसरा पेय नही है। जो राष्ट्र शराब की आदत का शिकार है, उसके बहुमुखी पतन के द्वार स्वय खुल जाते है। नशे से आक्रान्त और कुण्ठित प्रतिभाएँ देश हित कैसे कर सकती है? उनके बाहर का नशा भीतर की गदगी का प्रद्योतक है।)

एक घटना

घटना है एक अल्हड प्रकृति के सासद की, जो मद्य-पान के दुर्व्यसन से ग्रस्त था। चाहता था कोई ऐसा एक सु-सेवक मिले, जो तनिक से इशारे मे पूर्वापर/आगे-पीछे कीएक-एक बात समझ ले।

एक दफा एक नौकर आया। सासद महोदय ने कहा-वेतन

पूरा-पूरा दिया जाएगा। परन्तु एक कार्य के लिये मुझे पुन पुन· न कहना पडे, यह याद रखना। आज तक जितने भी नौकर मिले है, सारे बेवकूफ ही निकले। एक-एक वस्तु लाने के लिये सैकडो चक्कर लगाने पर भी कार्य रूचि माफिक नही बन पाता।

नवागन्तुक नौकर बात समझ गया और वही रहने लगा। उसने मन मे दृढ निश्चय कर लिया कि अपने मालिक को दुर्व्यसन से किसी तरह बचाना चाहिये। एक दिन सासद महोदय ने शराब की बोतल मगाई। नौकर बोतल लेकर आया और बगले मे बैठे सासद/मालिक के सामने वाली मेज पर रख दी, साथ ही ट्रे मे मास, दवा का बॉक्स, कफन की सामग्री रखने के अलावा एक डॉक्टर भी समीप खडा कर दिया। श्रीमान महोदय, हैरान थे, पूछा-यह सब क्या है?

नौकर ने उत्तर दिया- आप ही ने तो कहा था- सारी सामग्री एक साथ ही आ जानी चाहिये। अत सारी सामग्री साथ ही ले आया हूँ। देखिये-मद्य के साथ मास भी चाहिये, सो यह तैयार है। इससे रोग होगा ही, अस्तु डॉक्टर भी तैयार है और दवा भी। फिर इस व्यसन से मरना भी शीघ्र पडता है इसलिये जलाने के लिये कफन एव लकडियॉ भी तैयार है। शव-यात्रा के लिये आपके मित्रो को न्यौता भी दे आया हूँ। प्रियवर। व्यसनग्रस्त सासद सेवक की चतुराई और शक्ति की गहराई मे गये, तो मन-ही-मन शर्मिन्दा होते हुए लौट आए। ससद जैसी राष्ट्रीय गरिमा वाली सस्था का सदस्य भी यदि शराब जैसी बुराई से नही बच सकता, तो उसका सासद होना कहॉ तक उचित है? क्या ऐसा व्यक्ति देश की भलाई कर सकेगा? ये ज्वलन्त कितु

मूक प्रश्न आपके समक्ष दर्द से कराहते खडे है।

वारुणी का विस्तार बनाम शराब बंदी

हिमाचल प्रदेश मे सोलन की महिलाओ का कहना है कि जब सरकार से स्कूल खोलने की माग की जाती है, तो उसे पूर्ण करने मे दस साल लग जाते है, लेकिन शराब की दुकाने चुटकी बजाते ही खुल जाती है। जहरीले रसायन के मिलावट के विषय मे सरकार पूर्ण रूप से मूक बनी हुई है और मिलावटी मुनाफाखोरो को पूरी तरह से प्रश्रय दिया जा रहा है। तरूण वर्ग मे वारुणी तेजी से पल्लवित-पुष्पित हो रही है। बच्चो के भविष्य से चितित हो, ज्ञान एव शिक्षा ने शराब बन्दी का नारा दिया था, परन्तु वोट की राजनीति ने शराब बन्दी की अर्थी ही निकाल दी। यहॉ महात्मा गॉधी के इस कथन का उल्लेख समीचीन है 'यदि मै एक घण्टे के लिये सारे भारत का तानाशाह बन जाऊॅ तो मेरा प्रथम कार्य होगा– बिना मुआवजा दिये सारे भारत मे शराब की सब दुकानो को बन्द करवा देना। 'लेकिन अफसोस! शराब बन्दी 'कानून' परिधि के बाहर होती जा रही है, जो कि मानवता के साथ सरासर धोखा है।

विकृति : जन/वन की

जर्मन मे तीन लाख महिलाओ का परीक्षण किया गया जो मद्यपान करती थी, उनकी अधिकाश सतान छोटी नाक की थी, उनका मस्तिष्क विकृत था। यह बात सत्य है। आज मानव शराब पीता है - कल उसे शराब पीने लगती है। कुछ लोगो का मानना है कि अच्छे किस्म की शराब पीने से और अच्छा खाने से शरीर बनता है। लेकिन चिकित्साविदो का कहना है,

कि चाहे कितनी ही अच्छी किस्म की शराब क्यो न पी जाये, जिगर पर असर निश्चित ही पडता है। जिगर की सारी ताकत शराब पचाने मे समाप्त हो जाती है और जिगर दिनो दिन मोटा होता जाता है, पाचन शक्ति क्षीण होती जाती है, और पीने वाला एसिडिटी का शिकार हो जाता है।

ज्ञात रहे मदिरा पिलाने से वनस्पति नष्ट हो जाती है, इतना ही नही मदिरा की दुर्गन्ध से फूल की कली का खिलना बन्द हो जाता है, और वह समय से पूर्व ही झड जाती है। यदि पेड-पौधो की क्यारियो मे शराब मिश्रित पानी डाल दिया जाए तो उनमे फल नही लगते। पौधे धीरे-धीरे सूखने लगते हैं। जब वनस्पति के लिये शराब इतनी प्रतिकूल है, तो प्रश्न सहज विचारणीय हो उठता है कि वह मनुष्य को कैसे अनुकूल होगी? पशु-पक्षी जगत पर शराब के प्रयोग कितने हानिकारक है। उजागर तथ्य है, भोजन मे शराब मिलाकर खिलाने से शृगाल, गीदड, कुत्ता, कबूतर, उल्लू आदि पशु-पक्षी अकाल मे काल की शरण चले जाते है।

सुरापान : समस्याओ का सागर

स्वास्थ्य पतन का दौर तो उसी दिन/क्षण से शुरू हो जाता है, जिस दिन जिस क्षण व्यक्ति मद्य का पहला घूँट हलक से नीचे उतार लेता है। धीरे-धीरे उसके फेफडे खराब होने लगते है, हृदय रोग सामने आ खड़ा हो जाता है, और कैसर जैसी ला-इलाज बीमारियॉ मौत को न्यौत देती है। ध्यान रहे! शराब का सर्वाधिक दुष्प्रभाव शरीर के प्रमुख अवयव मस्तिष्क पर पड़ता है, जो कि शारीरिक समस्त क्रियाओ के सम्पादन एव नियमन

मे महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। मद्य, हृदय रोग एव फेफडो की समस्त क्रियाओ को नियत्रित एव नियमित करने वाले स्नायु तत्र को पूरी तरह क्षत-विक्षत कर देता है, जिसका एकमात्र परिणाम होता है, एक दुखद वेदना पूर्ण अकाल मौत। मद्य-पान पूरे नाडी सस्थान को निष्क्रिय कर मद्यप को ऐसे अज्ञात सुखो की दुनिया मे खीच ले जाता है, जिसके आनद मे मद्यपान का क्रम कसमे खा-खा कर भी दुहराता जाता है। स्नायविक क्रिया कमजोर होने के कारण स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है। ऐसा भी देखा गया है कि इस स्थिति मे व्यक्ति पागल भी हो जाते है।

इंग्लैड की पत्रिका 'दि प्लेन टुथ' मे प्रकाशित एक लेखानुसार रूस मे जितने हत्याकाण्ड होते है, उनमे पैसठ प्रतिशत नशे के प्रभाव के अतर्गत होते है। परिवहन दुर्घटनाएँ पच्चीस प्रतिशत मद्यपान के प्रभाव से होती है। इसी प्रकार चोरियो की चौरासी प्रतिशत घटनाएँ सुरापान के कारण घटती है एव बलात्कार काण्डो मे चौपन प्रतिशत शराब ही जिम्मेदार है।

शराब मे इथाइल अल्कोहल के साथ अनेक प्रकार के अशुद्ध मिथाइल अल्कोहल आदि रहते है, जो आखो को अधा एव किसी भी अग विशेष को चेतना-शून्य बना देते है। शराब जहाँ शरीर को जर्जर करती है, वही परिवार को आर्थिक खाई मे भी धकेलती है, इतना ही नही, नशे मे इसान सडा-गला मॉस भी खा जाता है। शराबी को नशे मे लगता है, जैसे वह किसी सुरग से अलकापुरी पहुँच गया हो, किंतु वास्तविकता यह होती है कि दूसरे क्षण वह अपने को पाता है, जैसे किसी ने उसे हिमालय से नीचे तलहटी मे पटक दिया हो या हाथी से उतार खच्चर

पर लबादे की तरह लाद दिया हो।

मद्यपान की लत चटपटे खाने की ओर आकर्षित करती है। धन की कमी न होने से धनाढ्यो द्वारा होटलो मे आधुनिक डिशो के आर्डर दिये जाते है। जो आमलेट से प्रारभ हो, मासाहार तक पहुँच जाते है। उससे धनवानो का धन और आचार-विचार ही नष्ट नही होता, बल्कि गरीबो की तबाही हो जाती है।

बर्बादी का नग्न ताण्डव

शराब के कारण स्वय बर्बाद, परिवार बर्बाद, अर्थ बर्बाद, नैतिक चरित्र बर्बाद। इस तरह सब ओर बर्बादी का नग्न ताण्डव दिखलाई देता है। जिससे अपराधी मनोवृत्तियॉ, पापाचार, दुराचार, उच्छृखलता, अनुशासनहीनता, उग्रवाद, आतकवाद, भ्रष्टाचार दोज मयक के समान नही, अपितु रबर की तरह या जल मे इक बिन्दु की तरह फैल जाते है। नशे की समस्या विश्वव्यापी समस्या है। महासमुद्र जैसी है, और उसके निवारण के प्रयत्न एक छोटे टापू जैसे है, अत यह सक्रामक बीमारी का रूप धारण कर भयकर परिणाम सामने ला रही है। सोवियत दैनिक 'सोयितस्काया' के अनुसार मानसिक कमजोरियो से ग्रस्त बच्चो की सख्या बढ रही है, इसका कारण है, पुरुषो और महिलाओ मे मदिरापान की बढती हुई आदत।

गम बुलाने का साधन नही

दरअसल लोग शारीरिक और मानसिक पीडा को भुलाने के लिये शराब पीने के लिये मजबूर हो जाते है। मन की पीडा बुझाने के लिये पेट मे शराब झौक देते है, परन्तु यह तो वैसी

ही बात हुई, जैसे बच्चे का मुँह दबाकर उसे न रोने के लिये डॉटना। बच्चा आपके भय से भले न चिल्लाए, पर अन्दर ही अन्दर सिसकता-सुबकता रहता है। यही स्थिति शराबी की है। उसे उसका कष्ट भले ही भूला हुआ जैसा लग रहा हो, पर उसकी पीडा भीतर सुबकती-सिसकती रहती है और वे पीते चले जाते है।

शायरो की नज़र मे शराब

शराब के विषय मे जौक ने कहा है-

ऐ जौक देख दुख्तरे रज को न मुँह से लगा।
छूटती नही यह काफिर मुँह से लगी हुई।

-ऐ जौक! तू इस अगूर की बेटी को मुँह से मत लगा, यह सेवन करने वाले के मुँह से छूटती नही है।

जिगर मुरादाबादी जैसे आला शायर को भी पश्चाताप करते हुए कहना पडा-

सबको मारा जिगर के शैरो ने।
और जिगर को मारा शराब के पैगो ने।।

मद्यप अपने सौभाग्य की नीव खोदकर उस पर अपने लिये रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा जैसे सतखण्डे प्रासाद को खडा करता है। उपर्युक्त तथ्यो की रोशनी से स्पष्ट है कि मद्यपान एक सामाजिक बुराई है, जो व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक एव शारीरिक पतन का प्रवेश द्वार है, जो सभवत सर्वविनाशिनी होने से त्याज्य है। अत व्यसन मुक्त जीवन जीने के लिये इसका परित्याग करना परमावश्यक है, क्योकि यह पतन की पहली पायदान है।



मांसाहार : मनुज का मरघट

सब जानते है कि विकसित एव विकासशील देशो की आधुनिक तकनीकी ने मानव को सुख-सुविधा के सर्वोत्तम साधन उपलब्ध करा दिये है। रोग मुक्ति हेतु आधुनिक रामबाण औषधियाँ प्रदान कर दी है, फिर भी देखने मे आते है अशात/परेशान/दुखी/पीडित और रोगग्रस्त चेहरे। मानसिक विपन्नताओ से विपन्न चेहरे। क्या कभी आपने सोचा? क्या कभी समझने का प्रयास किया कि आखिर इन सबका कारण क्या है, और है तो क्यो? आज की सुविधा कल की दुविधा एव दुर्दशा का कारण क्यो बनती जा रही है? गभीरता से विचार करने पर निदान निकलता है, प्राकृतिक एव सद्वृत्तो के नियमो का उल्लघन। आज के इसान ने दिमागी तरक्की कर ली है, या यूँ समझा जाये उन्हे दिमागी अजीर्ण हो गया है, जो वे प्राकृतिक भोज्य पदार्थ को छोड अप्राकृतिक आहार की ओर आकर्षित ही नही, निर्भर होते जा रहे है।

जो अपने आहार मे विवेक या मर्यादा नही रखता, वह है मानस विकारो का गुलाम। जो स्वाद नही जीत सकता, जो चार इच की रसनेन्द्रिय/रसना मे रस ना लेने का सकल्प नही कर सकता वह कभी इन्द्रिय विजयी नही हो सकता। भोजन विभाजन के लिये चितन आवश्यक ही नही, अपितु निहायत अनिवार्य है। शरीर के लिये भोजन है, भोजन के लिये शरीर

नही। सर्वविदित है कि शरीर से भोजन नही बनता, बल्कि भोजन से तन, मन, बुद्धि अथवा सारा जीवन चक्र ही बनता/चलता है। आधुनिक युग का दुर्भाग्य ही समझो, जो शरीर से भोजन बना रहे है। जी हॉ चौकिए मत, निहारिये। कत्लखाने, पौल्ट्री फार्म, मीट भोजनालय की ओर जहॉ शरीर से शरीर के लिए खुराक तैयार की जा रही है।

मनुज का मसान

मासाहार अप्राकृतिक आहार है। वह वनस्पतिज नही, प्राणिज है। भूलिए नही। मास शुक्र शोणित से उत्पन्न जीव का कलेवर/शरीर है। खरगोश, हिरन, सुअर, बकरा, मुर्गा, कबूतर आदि किसी के भी मास को ले अथवा अण्डे ही क्यो न ले, वह न भूमि से उत्पन्न होता है, न वृक्षो पर फलकर फलो की तरह लटकता है, न किन्ही पर्वत चोटियो पर ऊगता है। विचारो की विडम्बना देखिए, जब मास पिण्ड श्मशान मे पडा होता है, तब कहलाता है शव। जिसे लोग मुर्दा/लाश कहते है। जिसके स्पर्श मात्र होने पर स्नान करते है, किंतु जब वही मास, मास विक्रेता के यहॉ शो केस मे सजा/टॅगा होता है, तब वह जिव्हा लोलुपियो का भोजन, खुराक नाम पाता है। इसीलिये स्वामी विवेकानन्द ने कहा है-

लोग नगर ढिग करे, मरघट को स्थान।
वाह रे मासाहारी तूने, घर को किया मसान।

मनीषी आचार्य पूज्यपाद स्वामी कहते है, जब मासिक धर्म के समय केवल रक्त के प्रवाह से स्त्री स्पष्टत निन्द्य, अस्पर्शित हो जाती है, तब द्विधातुज (चाहे वह प्राकृतिक हो या कृत्रिम

प्रयोगो द्वारा तैयार की गई हो) माता-पिता के रज-वीर्य रूप धातुओ से उत्पन्न मास पवित्र एव भक्ष्य कैसे हो सकता है? जो अत्यन्त कुत्सित एव इद्रियो को उछृखल करने वाला एक उत्तेजक पदार्थ है। जो दुर्भाग्य एव व्यर्थ की बुराइयो का जमाव करता है, क्रूरता को बढ़ावा देता है। करुणा का गलभजन करता है और मनुष्यो को बलात् . हिसा की भयावही दिशा मे धकेलता है। ऐसी क्रूरता से उत्पादित घृणित आहार से जो अपने शरीर को पुष्ट एव शक्तिशाली बनाना चाहते है, उनसे क्षुद्र इस लोक मे और कौन होगा? उनकी दृष्टि परिपाक से अपरिचित है। वे 'मास' शब्द के अर्थ को नही जानते। मास शब्द स्वय उच्च स्वर मे अपने अर्थ की उद्घोषणा कर रहा है कि मा-अर्थात् मुझे, स अर्थात् वह, यानी जो मुझे खायेगा वह जन्मातर मे मेरे द्वारा खाया जायेगा। यही मास की मासता है।

नारकीय पीड़ा

मास के अशमात्र का भी भक्षण करने वाले के परिणाम परित इतने क्रूर और सक्लिष्ट हो जाते है कि उनमे दया, धर्म व्रताचरण करने योग्य कोमलता नही रह जाती। न ही वे परिणाम तीव्र कर्मबधन के उल्लघन मे अपने को समर्थ पाते है। सक्लिष्ट परिणामो के कारण वह सामिषाहारी सहज ही नरक भूमि मे उतर जाता है, जहॉ उसके स्वागतार्थ नारकी आयुध लिये पहले से ही खडे रहते है। जब उसे भूख लगती है तो पूर्व निवासी नारकी उस नवागतुक नारकी के शरीर को काट कर उस मास के टुकडे को दूसरे नारकी के रक्त मे भिगोकर उस नारकी के मुख मे डालते है। जब वह नारकी अपना मुख फेर लेता

है तो उसे मारते है और कहते है रे दुष्ट! खा, खा। पूर्व जन्म मे तू बडा मास प्रेमी था, परजीवों के मास को बहुत मीठा कहकर खाया करता था। अब क्या भूल गया? क्यो अपना मास खाने से मुख मोड रहा है ऐसा कहते हुए जलता हुआ कुश उसके मुख मे डाल देते है। तब अति तीव्र दाह से सतापित होकर प्यास की प्रबल पीडा से परितृषित कृमि, पीप और रूधिर से परिपूर्ण वैतरणी नदी मे उतर जाता है। वहॉ उष्ण और क्षार जल से उसका सारा शरीर जल गल जाता है, तब वह हाहाकार करता हुआ बाहर निकल भागता है। इस तरह दो, तीन दिवस नही, सागरो पर्यन्त असह्य पीडा का वेदन करता हुआ दु ख उठाता है।

विभिन्न विद्वानों के विचार

मनुमहर्षि मनुस्मृति मे कहते है कि जीव-हत्यारा, मास का क्रय-विक्रयकर्त्ता, पकाने वाला पाचक, अनुमोदक, भक्षक ये सभी दुर्गति के पात्र है, अमगल कलश है। वे अभी माया मूढता की परिधि मे कैद है। स्वामी दयानन्द सरस्वती के शब्दो मे ऐसे लोग लाशो का भक्षण करते है और उनका ही क्रय-विक्रय करते/कराते है। मास प्रचारक राक्षस है, क्योकि इसान वही बनता है जो खाते, पीते, सोचते, करते एव फेफडो से सीचते है।

इस्लाम के पवित्र तीर्थ मक्का स्थित कस्बे के चारो ओर मीलो दूर के घेरों में किसी भी पशु-पक्षी की हत्या करना निषिद्ध है। उस काल में हज़ करने वालो को मद्य, मांस पूरी तरह वर्जित है, उसका त्याग आवश्यक हैं। हज़ के लिए अहराम (सिर पर बाँधने

का सफेद कपड़ा) बाँध कर जाता है। अहराम की स्थिति हज़काल तक रहती है, उस दरम्यान पूर्ण ब्रह्मचर्य तो आवश्यक है ही, वह इस स्थिति में किसी प्राणधारी पर न ढेला चला सकता है, न घास नोंच सकता है। यहाँ तक कि न वह किसी वृक्ष की टहनी/पत्ती तोड़ सकता है। हज़ काल में वह पूर्ण अहिंसक होता है, क्योकि खुदा का फरमान है कि मुझे किसी भी प्राणी का मांस, खून स्वीकार नही है, अफसोस तब होता है कि जब आज खुदा की औलाद 'आध्यात्मिक साधना में मांस बाधक है' कहते हुए भी मांस खाती है।

गुरू नानक की वाणी भी कहती है-

जो रत लागे कपडा, जामा होई पलीत।
जो रत पीवे मानवा, तिन क्यू निर्मल चीत।।

साथ ही शेख सादी का पवित्र चितन देखिये, वे कहते है, जब मुँह का एक दॉत निकालने से मनुष्य को मर्मान्तक पीडा होती है, तो विचार करो कि उस जीव को कितना कष्ट होता होगा, जिसके शरीर से उसकी प्यारी जान निकाली जाती है।

मांसाहार-मानवीय आहार नही

प्रकृति प्रदत्त शारीरिक सरचनानुसार मासाहार मानवीय आहार नही है, क्योकि मासाहारी और शाकाहारी जीवो के अगो एव खान-पान के ढगो, आदि मे बहुत अतर है। मासाहारी पशु जीभ द्वारा पानी चप-चप कर पीते है, इनके दॉत व नाखून नुकीले होते है, पाचन आमाशय से शुरू होता है, आते छोटी होती है

जिसमे मास सड़ने से पूर्व आसानी से निष्कासित हो जाता है। ये एक बार मे एक से अधिक बच्चे पैदा करते है तथा बुद्धि के अभाव मे बच्चो तक को खा जाते है। इसके विपरीत शाकाहारी पशु जीभ निकाल कर पानी नही पीते, बल्कि मुँह डुबा कर या होठो से पानी पीते है। दॉत चबाने योग्य होते है। पाचन क्रिया की शुरूआत मुख से होती है। आमाशय विभाजित होता है और छोटी ऑत तिगुनी होती है। ये एक बार मे एक ही बच्चा (कुछ अपवादो को छोडकर) पैदा करते है, जिनका विपत्ति आने पर भी भक्षण नही करते।

इस तथ्य से यह स्पष्ट हो गया है कि मासाहार पशुओ तक के योग्य नही है फिर वह मनुष्यो के खाने योग्य कैसे हो सकता है? प्रकृति से कोई प्राणी मासाहारी नही होता। शेर, चीता, कुत्ता बिल्ली आदि के बच्चे जन्म लेते ही दूध पीते है, रक्त नही पीते है। मासाहार के सस्कार उनमे भी परिस्थिति एव आवश्यकता के अनुरूप पडते है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त खाद्य पदार्थों के स्थान पर अस्वाभाविक खाद्य पदार्थो का भक्षण मनुष्य की प्रकृति के सर्वथा विपरीत है। प्रकृति ने प्राणियो को अभयदान दिया है, इसीलिये वह स्वय नही चाहती कि हिसा का प्रभाव बढें, क्योकि इससे प्रकृति का सतुलन बिगड सकता है। निरामिष भोजन स्वाभाविक आहार है, इससे हमे सात्विकता मिलती है, इसके विरुद्ध सामिष आहार तामसिक प्रवृत्तियो को उभारता है।

मासाहार की मनाही · विभिन्न दृष्टिकोण से

जिव्हालोलुपी मानव ने अपनी स्वार्थान्धता के वशीभूत होकर छल प्रपचो का सहारा ले, धर्मप्राण भारतीय सस्कृति मे अधर्म

के बीज वपन कर उसे अर्द्धमृतक-सा बना दिया है। आध्यात्मिक चेतना के सुप्तावस्था मे पहुँचने से भारतीय मानस का रुझान मासाहार की ओर बढ रहा है, जो हर दृष्टिकोण से अनुचित एव आपत्तिजनक है।

नैतिक दृष्टि से मासाहार वर्जित है। नैतिकता की श्रेष्ठता, सात्विकता मे ही निहित है। मास के लिये हिसा करना नैतिकता के विरुद्ध आचरण है।

धार्मिक दृष्टि से तो मासाहार सर्वथा त्याज्य है। अहिसा को सब धर्मों का मूल माना गया है तथा हिंसा को निन्दनीय। किसी भी धर्म की नीव हिंसा पर आधारित नही है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से मासाहार स्वास्थ्य सतुलन में अत्यन्त बाधक है। मास मे यूरिक एसिड होने से मासाहारी का मूत्र तेजाबयुक्त होता है। मास अधिकाशत· दूषित एव कीटाणुयुक्त होता है। शाकाहारी भोजन, मास से कही अधिक शक्तिवर्द्धक है। इसके प्रमाण अमेरिका के एक विश्वविद्यालय के प्राध्यापक जारटिग फिसर ने परीक्षा एव अन्य रूपो से प्राप्त किये, जिनके अनुसार 'हाथ की पकड' मे मासाहारी बाइस मिनट ही ठहर सके, जब कि शाकाहारी एक सौ साठ से दो सौ मिनट तक ठहर सके। घुटने मोडने की कसरत मे मासाहारी अधिकतम ३९३ बैठके कर सके किन्तु शाकाहारी ७३१ बैठके लगाने मे सफल हुए। मासाहारी की तुलना में शाकाहारी अधिक परिश्रमी और सहनशक्ति वाले होते हैं।

सामाजिक दृष्टि से भी मासाहार अनुपयुक्ताहार है, क्योकि इससे हिसा की भावना जागृति होती है, और सामाजिकता के

अत का अदेशा बना रहता है। सामाजिकता की भावना का आधार ही अहिसा और सह-अस्तित्व है, तब फिर कैसे मासाहार को समाज मे प्रश्रय दिया जाये? मासाहार से उत्पन्न तामसिक वृत्तियो से अपराध बढते है तथा लोग व्यसनो मे रत रहते है। शाकाहार धरती का रोपण है, जब कि मासाहार क्षरण है। इसलिये मासाहार त्याज्य है।

वैज्ञानिक दृष्टि से मासाहार मनुष्य के लिये अप्राकृतिक है, जो विज्ञान सबधी विभिन्न खोजो से भी स्पष्ट हो गया है। प्राणियो के प्राकृतिक आहार का अनुमान उनके दॉतो की बनावट से सहज ही लगाया जा सकता है। मनुष्य के दॉत मासाहार के लिए उपयुक्त नही है। मास अतिशीघ्र कीटाणुग्रस्त हो जाता है, जिसके कारण इस दूषित मास का भक्षण करने वाले मनुष्य के लिये यह अत्यन्त हानिकारक होता है।

आर्थिक दृष्टि से देखे तो शाकाहार की तुलना मे मासाहार कई गुना महॅगा है। जितने मे एक किलो मास आता है, उतने मे दस किलो गेहूँ खरीदा जा सकता है। जनश्रुति के अनुसार एक पाव दूध चार रोटी के बराबर होता है। मासाहार मुख्य भोजन नही है। इसके लिये शाकाहारी भोजन भी आवश्यक है, जो अतिरिक्त रूप से खर्च बढाता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मासाहारी सबसे अधिक तनावग्रस्त रहते है। उनकी विचारधारा तामसिक भोजन के प्रभाव से दूषित हो जाती है, जिससे वे अविवेकी और अपराधिक वृत्ति से युक्त होते है।

मांसाहार : शक्ति का साधन नही

शाकाहारी भोजन से प्राप्त चिकनाई, प्रोटीन एवं

कार्बोहाइड्रेट आदि तत्त्वों से शरीर को ऊर्जा प्राप्त होती रहती है। अर्थात् शक्ति मिलती है। इसके लिये मास का होना आवश्यक नही है। मेल-युनिवर्सिटी मे एक प्रयोग किया गया था। एक वैज्ञानिक ने कुछ व्यक्तियो के भोजन मे जिससे उन्हे सौ से एक सौ बीस ग्राम तक प्रोटीन मिलता था, उसमे पचास ग्राम औसत की कमी कर दी गई। परिणाम यह निकला कि उन लोगो की कार्यशक्ति मे शत-प्रतिशत वृद्धि हो गई। वैज्ञानिक ने भोजन मे प्रोटीन की कमी मास की मात्रा घटा कर की थी। इससे यह स्पष्ट हो गया कि मासाहार शक्तिवर्द्धक नही है।

हारवर्ड युनिवर्सिटी के एक वैज्ञानिक ने बिल्लियो पर प्रयोग करके यह सिद्ध किया कि वे जितनी बार मास खाती है, उतनी बार उनकी हृदय की गति बढ जाती है। बिल्लियो की हृदय की धड़कन मे प्रति मिनट नौ बार से अधिक वृद्धि पाई गई।

विज्ञान की तुला पर मांसाहार

स्थिति कितनी शर्मनाक है। जिस भारत देश मे 'मास खाकर जीने की अपेक्षा घास खा कर मर जाना अच्छा है', ऐसा मानते थे, वहाँ के जिव्हालोलुपी स्वादप्रिय, नकलची लोगो का जीवन बाह्य प्रदर्शन, दिखावा और फैशन-परस्ती ने लक्ष्य-विहीन बना दिया है। पश्चिमी आँधी मे जूठी उड़ती पत्तलो की तरह आदमी हवा मे तैर रहा है। उड़कर कहाँ पहुँचेगा, स्वय को भी ज्ञात नही है? दिशा विहीन निरुद्देशीय उडान के पीछे भागने वाला किसी पर्वत के शिखर पर उतरेगा या किसी खाड़ी मे जा गिरेगा, भगवान ही इनका मालिक है। आज अधिकाश वर्ग हर

पहलू को धर्म की कसौटी पर नही कसता अपितु विज्ञान की तुला पर तौलना चाहता है, तो आइये। तौलिए विज्ञान तुला पर ।

मासाहार हमारे लिये कितना घातक व असाध्य रोगो को निमत्रण देने वाला है, इस पर जो निष्कर्ष बडे-बडे डॉक्टरो एव वैज्ञानिको ने निकाले है, वे ये है- जिन्हे नजरअदाज नही किया जा सकता।

१ मासाहार का मतलब है, गभीर व्याधियो का बुलावा, कैसर के रिश्तो के निमत्रण का साधन, मासाहार मे कोलेस्ट्रोल की मात्रा अधिक होने से हृदय रोग, चर्म रोग, कुष्ठ रोग, पथरी एव गुर्दे सबधी बीमारियाँ अजन्मी नही रहती।

२ शायद आप नही जानते व्यापारिक दृष्टि से पशुओ का वजन बढाने के लिये उन्हे तरह-तरह के रासायनिक मिश्रण दिये जाते है, जिनमे से एक है डेस (डायथिस्टिल-बेस्ट्रॉल)। जो गर्भवती महिलाएँ डेस युक्त मास का सेवन करती है, उनकी सताने आगे जाकर कैसर की गिरफ्त मे आ जाती है। यह कोई कपोल कल्पित नही वरन अक्षरश सत्य है। कई डेस बेवीज से युवतियाँ कैसर का शिकार हुई है।

३ पुरुषो मे इस तरह की डेस, 'स्त्रैणता' का कारण बनती है। विकास समय से पूर्व हो जाता है जो स्वास्थ्य के लिये खतरनाक है।

बालिकाएँ जितना अधिक मास सेवन करेगी, उतनी ही जल्दी

रजस्वला होगी और तदनुसार स्तन कैसर का खतरा भी उसे उतना ही अधिक होगा। मास या अडायुक्त आहार न सिर्फ शीघ्र रजोस्राव करता है, अपितु स्वाभाविक अवधि को और अधिक लबी खीच ले जाता है।

४ मासाहार मे जिन तत्वो को पुष्टिप्रद बतलाने का भ्रामक एव खतरनाक प्रयत्न किया गया है, उन तत्वो मे एक और विपत्ति जुडी हुई है-यूरिक एसिड की अधिकता।

५ ब्रिटेन के प्रख्यात चिकित्सक डॉ अलेक्ज़ेण्डर कहते है कि उक्त तत्व शरीर के भीतर जमा होकर गठिया, मूत्र विकार, रक्त विकार, फेफडो की रुग्णता, यक्ष्मा, अनिद्रा, हिस्टीरिया, एनिमिया, निमोनिया, गर्दन दर्द, यकृत और न जाने कितनी बीमारियो को जन्म देता है। एक बात और है कोलेस्ट्रोल की अत्यधिक मात्रा रक्तवाहिनी धमनियो मे जमकर उसे मोटा कर देती है, जिससे हार्ट अटैक, हाई ब्लड प्रेशर की भी सभावना शत-प्रतिशत बढ जाती है। समृद्ध और औद्योगिक देशो मे दो तिहाई लोगो की मौत इसी का अजाम है।

६ मासाहार से मस्तिष्क की सहनशीलता, सहिष्णुता और स्थिरता का ह्रास होता है।

७ मासाहार से वासना और उत्तेजना बढाने वाली प्रवृत्ति पनपती है। क्रूरता और निर्दयता बढती है। कोमल सद्भावनाओ के नष्ट होने से क्रोध, तनाव और मानसिक विकार उत्तेजित हो उठते है, परिणामस्वरूप वे विकार समाज मे पारस्परिक मनमुटाव, लूट-खसोट, खून-खराबे

और गृह कलह मे प्रबल निमित्त बन जाते है। डॉ क्लेमुड ने कहा है कि बच्चो को मास की आदत डालना, उन्हे आलसी, दुर्बल और झगडालू बनाने की शुरूआत है।

८ डॉ एण्डरसन का कहना है एक सीमित अवधि के पश्चात मानव की आदते, मासाहारियो से भिन्न होने के कारण, मास सेवन से उत्पन्न विष को नही रोक पाती है, फलश्रुति यह होती है कि विष, रक्त मे घुलकर रक्त को विषाक्त कर महारोगो को जन्म दे देता है।

९ वधशाला/वध स्थल की ओर ले जाते समय अथवा वध का सकेत मिलते ही वध-वेदी पर चढने वाले प्राणियो को जिस भयभीत एव चीत्कार भरी स्थिति से गुजरना पडता है, उसके कारण उनकी अत स्रावी ग्रथियॉ तेजी से विष उगलने लगती है। विगत दिनो डॉ रोसमर भारत यात्रा पर आए थे, यहॉ उनका सेमिनार था। उन्होने बताया कि जब बूचडखानो मे जीवन और मृत्यु के झूले मे झूलता प्राणी दु ख भरे हारमोन्स छोडता है, उस स्थिति मे तीव्रता से उभरते हुए हारमोन्स (रसायन) कुछ ही क्षणो मे सारे रक्त मे घुल जाते है। उसका प्रभाव नियमत मास पर पडता है, जो खाने वालो के पेट मे पहुँचे बिना नही रहते। पेट मे पहुँचते ही मनुष्य की सुप्त तामसिक प्रवृत्तियो को एकदम झकझोर कर भड़काते है। जापान के विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रोफेसर बेंज अनेक प्रयोगो के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मानव प्रकृति मे क्रोध, उदण्डता आवेग, आवेश, अविवेक, अमानुषिकता, अपराधिक प्रवृत्ति, कामुकता

जैसे दुष्कर्मों को भडकाने में मासाहार का बहुत ही महत्वपूर्ण हाथ है।

१० इतना ही नही मासाहार के कारण पर्यावरण सदूषित एव असतुलित हो रहा है। वन, मरुस्थल मे बदल रहे है। जल स्रोत सूखते जा रहे है अथवा यू कहिए काफी हद तक नीचे उतरते जा रहे है। पृथ्वी अपनी उर्वरक शक्ति खोती जा रही है। आकाश, धरती एव समुद्र मासाहार के उत्पादन तथा रासायनिक विषो से प्रदूषित हो रहे है। चारो ओर प्रदूषण मौत का रूप धारण कर मडरा रहा है, जिसके दुष्प्रभाव से आम आदमी की जीवनी शक्ति एव आरोग्य पल-पल क्षीण होता जा रहा है और मनुष्य स्वय को एव आगामी पीढी को ऑखे मूँदकर बेरहमी से जमीन पर अच्छी तरह पैर टिकाने के पूर्व ही विनाश के महागर्त मे धकेल रहा है।

११ मासाहार से प्राप्त प्रोटीन 'समस्या ही नही समस्याओ की कतार' खडी कर देता है, जिनमे से गभीर समस्या है-गुर्दे मे पथरी और आवश्यकता से अधिक प्रोटीन जो न केवल कैल्शियम के सचित कोष को खाली करता है, अपितु किडनी से बेवजह अधिक श्रम लेकर उसे बुरी तरह क्षतिग्रस्त करता है।

१२ मासाहार कब्ज का जनक है, कारण वह फाइबर रहित होने से ऑतो की सफाई करने मे असमर्थ है। उल्टे वह सड़ाँध पैदा करता है। जिन पशु-पक्षियो से मासोत्पादित किया जाता है उन बीमार पशुओं के रोग मुफ़्त मे मासाहारी

के पेट मे उतर जाते है।

१३ आर्थिक दृष्टिकोण से मासाहार इतना महॅगा है कि एक मासाहारी की खुराक से बीस शाकाहारियो का पेट भरा जा सकता है।

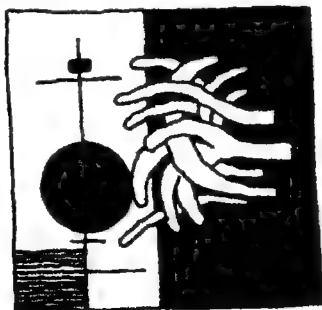
इस प्रकार मासाहार की बुराइयो/हानियो को उजागर करने वाले सैकडो तथ्य है। अस्तु, मास भक्षण नखो से खुजली खुजलाने जैसा कष्टकर है। अब आप स्वतत्र है। फैसला करे 'आखिर आप क्या चाहते है?' मनुष्य की दुरत लिप्सा अब न केवल स्वाद तक सीमित है, किंतु उसने शौक/शृगार की विषैली शक्ल धारण कर ली है। मुद्रास्फीति ने भारतीय मौलिकताओ की जो धज्जियॉ उडाई है, उसकी क्षतिपूर्ति भारत कभी नही कर पायेगा।

अहिंसा मे आस्था

भारतीय सस्कृति हमेशा से अहिसक शैली मे आस्था रखती आई है। अहिसा हमारी जननी है। उसने हमे जो कुछ दिया, उसे हिसा कभी नही दे सकती क्योकि हिसा का चरित्र ही कुछ देने की अपेक्षा सब कुछ छीनने का है। गहन समीक्षा के लिये ज्वलत प्रश्न है कि आज मानव जीवन मे हिंसा, मारकाट, कत्ल, कलह-द्वेष, चोरी, तस्करी, धोखाधडी, बेईमानी क्यो है? तो आप इन सबका एक ही वाक्य मे उत्तर पायेगे- रहन-सहन, खान-पान मे काफी हद तक गिरावट। क्या यह सच नही है जो आप खा, पी और पहिन रहे है उसी तरह का बर्ताव आपके आचरण से प्रकट हो रहा है? मासाहारी पशु-पक्षी और मनुष्यो की तुलना मे शाकाहारी पशु-पक्षी और मानव जगत अधिक सौम्य और आत्मीय होता है। यदि दोनो के आचरण और प्रकृति की

तुलनात्मक समीक्षा की जाए, तो सारे तथ्य धूप की तरह स्पष्ट हो जाएँगे।

'प्रकृति से प्रीति नही दोहन' की तर्ज ने देहधारियो का प्रेम/प्यार द्रोह के सुपुर्द कर दिया है। करुणा का स्थान क्रूरता लेती जा रही है) अस्तु, अपनी स्वार्थलिप्सा हेतु अपनी ही माँ वसुधरा की हरीतिमा साडी उतार, उसे नग्न/बजर कर रहा है। कभी वन्य पशुधन शिकार बनता था, आज विवेक धन कहा जाने वाला नर स्वय अपनी इन्द्रिय लोलुपता का शिकार बन रहा है। जिस सस्कृति मे काटना, चीरना, पकाना जैसे हिसा परक शब्द वर्जित थे, वहाँ की यह वीभत्स स्थिति ऐसे घिनौने क्रूर कृत्य, वे भी बेधडल्ले, इसलिए तामसिक आहार न केवल निदनीय है अपितु त्याज्य भी है। मासाहार से होने वाले भयकर परिणामो के तथ्यो को विभिन्न दृष्टिकोणो की तुलाओ पर तौलने के बाद भी क्या आप मास का भक्षण करेगे? और यदि न मे उत्तर है तो फिर आइये! व्यसन मुक्त जीवन के पथ पर एक कदम और आगे बढाते हुए मासाहार का परित्याग करे, क्योकि यह मानवीय आहार नही है। ■







अभिसारिका : सर्वस्वहारिणी

शराब-कबाब-शबाब यह तिकडी है। जहॉ शराब होगी अनचाहे कबाब और शबाब उसके पीछे लग जाएँगे। शराब की लत चटकारेदार डिशो की ओर आकर्षित करती हुई कबाब तक खीच ले जाती है। अब समझे कबाब है क्या? तो जानिए। कबाब का अर्थ कीमे की टिकिया अर्थात् कटे हुए मास के कोफ्ते। जब कबाब का स्वाद आदमी के मुँह पर एक बार लग जाता है, तब उसकी स्थिति ठीक वैसी ही हो जाती है, जैसे कि किसी 'खून लगे प्राणी' की। कबाब स्वय अपने आपमे एक उत्तेजक पदार्थ है और है तामसिक भोजन। जो देता है वासनाओ को हवा। दुर्वासना ग्रस्त मानव के पैर शबाब की तग गली मे तेजी से बढ जाते है। शबाब के मायने है तारुण्य, जवानी, यौवन।

जैसा कि मास के प्रकरण मे कहा गया था कि मास, किशोरो मे असमय ही यौवन भर देता है। अपरिपक्वकाल मे यौवन प्राप्त दूषित मानस, वासना-वासित चित्त, पिजडे के शेर की तरह चचल रहता है। वह अपनी कामुकता भरी शारीरिक वासना की भूख शात करने के लिये 'कामुक्यालय' की शरण ले लेता है। उनके दर पर कदम रखते ही वे कामुकियॉ अपने देह व्यापारियो को चातुर्य से अपने घेरे मे ले 'पण्यस्त्री' इस

नाम को सार्थक करती है। वे दृष्टि-विषा, प्रथम दृष्टि मे ही उनके मन को मोहित कर लेती है और आहिस्ता-आहिस्ता उसके धन वैभव के साथ-साथ, सत्य, सयम, सदाचार, सौन्दर्य, शर्म, लज्जा, मर्यादा, चरित्र आदि तमाम सपदाओ सहित प्रतिष्ठित गुणो को निगल जाती है।

कपट-कपाटो के बीच उनका हृदय छल के व्यासपीठ पर आसीन रहता है। समुद्र की बालु का प्रमाण जाना जा सकता है, सर्प, रात्रि, और जल-मध्य मार्ग को जाना जा सकता है। कहने की आवश्यकता नही समस्त ग्रहमडल को भी गिना जा रहा है, परतु इन अभिसारिकाओ के चचल चित्त को नही जाना जा सकता, क्योकि ये धन लोभिनी हृदय मे किसी को बसाती है, वार्तालाप किसी अन्य पुरूष के साथ करती है, नेत्र कटाक्ष से अन्य किसी को बुलाती है। वस्तुत उनका किसी के प्रति सच्चा प्यार नही होता। धन समाप्त होते ही आदमी को चूसे हुए गन्ने की तरह फेक देती है।

ये अभिसारिका, गणिका, दासी नगरनारी, नगर-नायिका, सर्ववल्लभा, कामुकी, दारिका, कुट्टिनी, पण्यस्त्री, रूपाजीवा, विलासिनी, वारमुखी, विभावरी, वैश्या, क्रीडानारी, लज्जिका, मगलामुखी, बर्बटी और तवाइफ आदि बत्तीस नामो से लोक मे जानी जाती है। इनके इन सभी नामो से कामुकता/झाकती/झलकती है। लक्ष-लक्ष व्यभिचारियो से सेवित, अतिशय निकृष्ट, वचन से कोमल, मन की दुष्टा, शील रत्न लूटने वाली गणिका का नाम जिव्हा द्वारा अवाच्य है।

अभिसारिकाः सर्वस्वहारिणी

अभिसारिकाएँ सर्वस्व हरण किस प्रकार करती है इस पर एक सक्षिप्त दृष्टि –

- **जरा और देखिए.....। धूलि उड़ाने वाली आंधी के समान ये अभिसारिकाएँ ऑखो में राग विस्तारती है अर्थात् नेत्रो मे लालिमा और शरीर मे कम्प पैदा करती है।**
- **तममयी शर्बरी जैसी ये क्रीडानारियॉ आलोक, प्रकाश, ज्ञान-विवेक को पूरी तरह अस्तित्वविहीन कर देती हैं।**
- **चोर की भॉति स्वयं तो अर्थपरायण है, किंतु दूसरे का धन हरण करती है। (लेती सरवस सम्पदा, देती रोग लगाय)।**
- **ये राक्षसियॉ मद्य, मास प्रिय होती है (डाकू, चोरो का गिरोह, वेश्याएँ और व्याभिचारी पुरूष ये सब के सब बिना नशे के जिदा नही रह सकते) ये निशाचरी लोक यानि संपर्क में आये हुए मनुष्यों की जीवनी शक्ति शोषित कर/निःसत्व/मृतक के समान छोड़ देती है।**
- **ये धधकती हुई चिनगारियॉ अनंगप्रिय को 'राग**

की आग' मे सर्व ओर से संतापित करती है।

- सारमेयी की तरह स्वार्थ साधन के लिए अपने यार की चाटुकारी करती है।

- यह विलासिनी वह वारूणी है जो सेवनकर्ता के चित्त को सम्मोहित कर माता-पिता-पुत्र, भगिनी भ्राता से विलग कर देती है। इतना ही नही गुरूजनो के हितकारी वचन उसे रूचिकर नही लगते। उसे मात्र वह विलासिनी ही सुखद लगती है, जैसे सर्पदंशी को कडवी नीम।

- 'रजक शिला सदृशीभिः कुर्कुर-कर्पर-समान चरिताभि·'। ये वेश्याएँ धोबी की वस्त्र धोने वाली शिला के समान है। जिस पर उच्च/नीच घरों के अच्छे-बुरे/ गंदे-मैले वस्त्र धोए जाते है, उसी प्रकार वह भी प्रतिष्ठित राजा/नीच चांडाल सभी के द्वारा उपभोग की जाती है। जैसे एक कपाल को बहुत से कुत्ते खीचते है, वैसे ही यह 'नगरनारी' नगर के रूग्ण, स्वस्थ्य,/नीच, उच्च सभी की भोग्या है।

- जिस प्रकार कुठारी के द्वारा उत्तम जाति की लताएँ भी छिन्न-भिन्न कर दी जाती है। उसी प्रकार

गणिका कुठारी तप, व्रत, विद्या, यश, कुलीनता, इन्द्रिय दमन और नैसर्गिक दया प्रभृति गुणो को शीघ्र ही तहस-नहस कर देती है।

- **धन और लोभ की रस्सियों से कसी हुई ये तवाइफ़े चांडाल और कुरूप का भी उपभोग कर लेती है एव धन रहित होने पर राजा एवं कामकुमार जैसे सुंदर सलोने पुरुष को भी वैसे ही छोड़ देती है जैसे पुण्यक्षीण होने पर लक्ष्मी पुरुष को।**

व्याधियो का पारितोषिक

द्रव्यहरण, कष्टदान, रोगप्रतिदान इनका मुख्य कार्य है। जो इनका समागम/सहवास करता है, अपने उन आशिको को मास, मदिरा, जुआ जैसे दुर्व्यसनो के चक्रव्यूह मे फॅसाकर, कष्ट-आपदा-आतक का कोष' बना देती है।सर्वस्व हरण कर, बदले मे उपदश, मूत्रकृच्छ एव अपने शरीरगत व्याधियो का पारितोषिक देकर, दुर्गति का प्रमाण पत्र दे, कृत दुष्कृत्यो का फल भुगतने, श्वभ्रो की गहराईयो मे उतार देती है। यह साक्षात् अपवित्रता की भूमि एव उसी पर ऊगने वाली विष बेल है। शिवमार्ग की अर्गला है। धर्मरत्न की चोर है। इसे ब्रह्मा ने सर्व शर्म प्रदाता, तपरूप धन की चोरनी, दु ख दान मे दक्ष, मनुष्यो मे कामोदीपन कर नष्ट करने वाली मारि/प्लेग के समान तथा मनुष्य रूप मदोन्मत्त गज को बाधने के लिये गजबधनी के समान बनाया है।

श्मशान की घटिकाएँ

जैसे उदरगत अपवित्रता का ससर्ग पाकर केशर सुरभि से सुरभित पायस/क्षीरान्न, बादाम का हलवा, पिस्ता/काजू की कतलियो जैसी लोक मे उत्तम गणमान्य वस्तुएँ भी जब पल भर मे अशुचिमय द्रव्यो मे परिणत हो जाती है, तब क्या विचित्र विटो से घिरी सर्ववल्लभा, नगरनायिका का झूठा आश्वासन भरा स्नेह, आलिगन, वचकपना सरल, सुदक्ष, सुपर्व (उत्साहवान) कुलीन व्यक्ति को वक्र, मूढ, उत्साहहीन और अकुलीन नही बनायेगा? क्यो नही, अवश्य ही बनायेगा। एतदर्थ ये वेश्याएँ श्मशान की घटिकाओ की भाँति त्याज्य है।

क्षणिक वैषयिक सुखैषणा

विडम्बना है अग्नि की दाहकता, व्याधि की हिसकता को जानता हुआ प्राणी कैसे उसमे हाथ डालता जा रहा है। वेश्या का सग साक्षात् विष से भी अधिक भयानक है विषं अग्नि है, तो वेश्या अग्निमय चिमटा। अगार को उठाकर फेक दो, तो उतने नही जलोगे, पर यदि चिमटा चिपक जाये , छू जाये तो चाहे जितनी जल्दी करो वह फफोला/छाला कर ही देगा। इसलिए अग्निमय चिमटा रूप वेश्या-सग से सतत बचते रहो। उसकी विषाक्त छाया तन तो दूर मन पर भी मत पडने दो। जो विषय तृप्ति के रास्ते पूर्ण होना चाहता है, वह अपने आपको स्वय धोखा देता है अथवा यूँ भी कह सकते है सुमेरू जैसी वज्रगिरि को फूलो के बाण से भेदना चाहता है। क्षणिक वैषयिक सुखैषणा के कारण अनेक जन्मो तक दु सह यातनाएँ भुगतनी पडती है,

चूँकि विषयाभिलाषा 'ससार के खूँटे से' विषयी का मन बाधती है।

वेश्यावृत्तिः एक घिनौना सामाजिक अपराध

वेश्यावृत्ति एक घिनौना सामाजिक अपराध है। मनुष्य के नैतिक पतन की सूचना है। देखो! चारूदत्त को, जो पूर्वजो की बत्तीस करोड दीनार जैसी प्रचुर सम्पदा वेश्यावृत्ति की आग मे स्वाहा कर गया और अत मे परिणाम यह निकला कि स्वय को एक दिन अपने ही भवन के पिछले भाग मे पुरीषालय मे पडा हुआ पाया।

ये धनेच्छुक वेश्याएँ धन हेतु हँसती है, रोती है व अपना प्रेम प्रदर्शित करती है। आने वाले प्रत्येक प्रेमी को विश्वास दिलाती है कि हे स्वामिन्! आप ही मेरे सब कुछ है। आपके अतिरिक्त मेरा कोई भी नही है। मै आपके बिना जीवित नही रह सकती, किंतु मन ऐसा अनुभव करता है जैसे कोई बेगारी अधेरे कमरे मे किसी अज्ञात लाश को -ढो रहा हो/ स्पर्श कर रहा हो।

माँ की ममता. एक प्रेरक प्रसंग

ऐसी ही 'दुष्टा कपटकोटीना घटने सा पटीयसी' का प्रेमी बना एक युवक! उस पापिनी, विलासिनी वेश्या मे वह इतना आसक्त अधा हो गया कि वह जो कहती उसे स्वय को विपत्ति मे डालकर पूर्ण करने मे तत्पर हो जाता। एक पल-छिन उससे जुदा न होता, श्वास-प्रश्वास उसी के अधीन हो गया। एक दिन प्रथम कटाक्ष मे ही उसे बीधते हुए कह बैठी, अगर तुम मुझे

सममुच चाहते हो, तो जाओ। पहले अपनी मॉ का कलेजा लेकर आओ तब होगी अगली बात। कामाध तो कामाध ही ठहरा। आगे देखा न पीछे। अच्छा सोचा न बुरा और चल दिया मॉ के घर की ओर। प्रेयसी का मनोरथ पूर्ण करने। जैसे ही मॉ ने बेटे को देखा उसका कलेजा मुँह को आ गया। स्नेहाश्रु भर कातर स्वर मे बोल उठी, 'आओ लाल। क्या रास्ता भूल गये? तुझे देखने को ये वृद्ध ऑखे तरस गई। बेटा। तू सुखी तो है, क्या अपेक्षा है? मै तुझे अवश्य दूँगी। बेटे का दिल धडका। अपनी मुराद पूरी होते देख बोल उठा 'क्या तू मुझे सचमुच वह दे सकोगी जो मै मॉगूगा?' मॉ ने कहा—'हॉ, हॉ क्यो नही?' बेटे के मुख से शब्द फूट पडे 'ओ मॉ। तेरा क ले जा लेने और वह निस्तब्ध हो गया। मॉ बोली - 'बेटा। चुप क्यो हो गये, बोलो बोलो बोलते क्यो नही? मै तुम्हारी मॉ हूँ, मै तुझे कलेजा देकर भी सुखी/प्रसन्न देखना चाहती हूँ/ उठ। ला, कृपाण ला। और निकाल ले कलेजा मेरा। सारा वातास नीरव हो गया। बेटे ने कृपाण उठाई, मॉ का कलेजा निकाला और तीर की तरह घर से बाहर हो गया। सोच नही पा रहा था कि इतनी आसानी से मुराद पूरी हो जायेगी अब उसकी ऑखो मे थी केवल उसकी एक प्रेयसी। आनदित हो हवा की गति से दौड़ा जा रहा था। एक पत्थर से अचानक पैर टकरा गया, ठोकर लगी, गिर पडा। हाथ से कलेजा उछल कर एक वृक्ष की छॉव मे कटकाकीर्ण धरती पर जा गिरा। गिरते ही कलेजे से कलेजा चीरती हुई आवाज आई 'ओ मेरे लाल। कही तुझे चोट तो नही आई। मॉ की ममता को ठुकरा कलेजे को उठा और बढ गया

अपनी प्रेयसी की ओर और कुछ ही पलो मे जा पहुँचा उसके निकट। युवक के हाथ मे उसकी माँ का कलेजा देखते ही द्वार बन्द कर वेश्या बोल उठी 'जाओ! तुम्हारे लिए आज से मेरा द्वार सदा-सदा के लिए बन्द है। जो अपनी माँ का नही हो सका, वह मेरा क्या होगा?' सुनते ही युवक के चेहरे से हवाईयाँ उडने लगी। उसे अफसोस था माँ के समाप्त होने/खोने का और दु ख था प्रेयसी को न पाने का। यह है वेश्या प्रिय का उजागर नग्न सत्य।

जो इसके चगुल मे फॅसता है, वह सब कुछ गॅवाकर, लुटे-पिटे, थके-हारे, श्मशान मे शवो की शाति भग करने वाले व्यक्ति की तरह अनत निराशाओ का कफन ओढ वापिस घर लौट आता है। लगता है मानो वह परिताप की अग्नि मे जल- जलकर दहकता अगारा हो गया हो, और विषयो के अनुचिन्तन मे डूबा हुआ उनका तृषित तरूण मन असमय मे ही वृद्ध हो जाता है, कारण विषय-विकार की स्थिति विष ही है और ऊपर से मन असयत हो, तो कहना ही क्या? नीतिज्ञ वेश्या के सबध मे कहते है –

> दर्शनात् हरते चित्त, स्पर्शात् हरते बल।
> भोगात् हरते वीर्यं, वेश्या साक्षात् राक्षसी।।

अस्तु, हितेच्छुओ को चाहिये! हो रही राक्षसी मति को कुटेव से बचाये और व्यसनमुक्त जीवन जीने की दिशा मे सफल कदम उठाये। ■





आखेट: हिंसा का आधुनिक आयाम

जिव्हा स्वाद, शौक/अधुनातन फैशन, मनोरजन एव कौतुक निमित्त हरी-भरी धरती पर कूदते-फुदकते, छलागे भरते बदर, खरगोश मेढक, मृगादि निरीह, भोले, खुशमिजाज, निरपराधी वनवासियों के जीवन से खिलवाड करना, जीवन छीनना, उनका परिवार उजाडना आखेट है इसे मृगया, शिकार अथवा पारद्धि भी कहते है।

ज्ञात रहे! शिकार सम्यक्त्व गुण को पूरी तरह घायल कर देता है। साथ ही यह भी ज्ञातव्य है कि सम्यक्त्व का प्रधान गुण अनुकम्पा है। जहॉ अनुकम्पा है, वहॉ शिकार शून्य है) जहॉ शिकार है, वहॉ अनुकम्पा अनुपस्थित है। शिकारी पर सवार निष्ठुरता, अनुकम्पा को ठीक वैसे ही निहारती है, जैसे भैसा को अश्व। जिसका नामोच्चार भी अधकारक है, ऐसा यह व्यसन सकल्पी हिसा है।

मद्य-मधु-मॉस (मकार त्रय) का भोक्ता सुचिरकाल तक जिन घोर पापो का सचय करता है, उन तमाम पापो को शिकारी दिनभर मे अर्जित कर लेता है, फलत अनत आपदाओ का आस्पद बन जाता है।

आज राजस्व विकास के नाम पर, धन की होडा-होडी



मे धन के लिए पागल हुआ मानव घोर हिसा मे प्रवर्त हो, शस्य-श्यामला वसुन्धरा को बजर बना रहा है तथा प्रकृति की विराट सत्व सपदा लघुकाय चीटी से विशालकाय गजराज का भी कत्ल करने से नही चूक रहा है। ज्यो-ज्यो वह सभ्य/सुशिक्षित होता जा रहा है, त्यो-त्यो अत करण से करुणा पलायन हो रही है, और उपहार मे भेट स्वरूप क्रूरता देती जा रही है।

शिकार के आविष्कृत आयाम

कृषि मे कीटनाशक औषधियो और रासायनिक द्रवो ने तो जीव जगत पर गजब ही ढाया है। जिसमे सहयोगी बनी, बायर, हेस्ट, रेलीज और युनाइटेड फॉस्फोरस लिमिटेड आदि कपनियॉ। बताते है कि साइपरमेथिन जो कि अत्यधिक प्रभावशील है कि एक सौ मि ली मात्रा, दो सौ लीटर पानी मे घोल कर उपयोग किये जाने से जहॉ जिस वनस्पति पर फेकी/छिडकी जाती है, वहॉ के जीवो का उसी वक्त अवसान हो जाता है, वे सदा-सदा के लिये सो जाते है। यह है आज के शिकार के आविष्कृत आयाम।

आज महावीर और बुद्ध के देश मे हिसा की पद्धति का नवीनीकरण हुआ। जिव्हा लोलुप जीभ के जायके के लिए दिनकर की आद्य किरण धरती पर पडने के साथ ही लाखो प्राणियो के प्राण समय पूर्व ही मौत के सुपुर्द कर देते है।

शिकार शाला

देखिए! एशिया का सबसे बडा कत्लघर/शिकार शाला

देवनार (बम्बई) है, मे हर उम्र और हर किस्म की गाय-बैल, बछडा-बछडी, भेड-बकरियो की जीवन लीला क्षणार्द्ध मे समाप्त हो जाती है। अफसोस की बात तो यह है कि लोभी–लालची व्यक्ति/व्यापारी स्वस्थ्य जानवरो के पैर तोड/बर्बाद कर नकली प्रमाण पत्र ले कर देवनार की शिकार शाला मे बेच देते है। पश्चात तैयार शुदा, डिब्बा बद मास देश-विदेश मे निर्यात कर दिया जाता है। सभी सामिषाहारी मनोवैज्ञानिको के निर्देश को ख्याल मे ले। उनका कथन है कि कत्ल करने की प्रक्रिया मे पशु-पक्षियो पर जो प्रतिशोधात्मक प्रतिक्रियाएँ होती है, वे मासाहारी की चेतना पर अतरित होती है, परिणामस्वरूप हृदयरोग, कैसर, डायबीटीज (मधुमेह) जैसी भयानक व्याधि के शिकार हो जाते है। क्या आप जानते है, कि डायबीटीज का रोगी भोजन से पूर्व जो इन्सुलीन लेता है, वह कैसे प्राप्त होता है? नही जानते, तो जानिये। वह गाय, बैल, भेड आदि का भविष्य खत्म कर उनकी पेक्रियाज (अग्नाशय) मे से प्राप्त की जाती है, जिसमे न मालूम कितने जानवरो को मृत्यु मुख देखना पडता है।

दूसरी बात डेक्सोरेज क्या है? यह भी तो देवनार मे शिकार हो रहे पशुओ का ९५% खून है। कहते है देवनार से प्राप्त तरोताजा खून एल्यूमिनियम के ड्रमो/टीनो मे भर-भर कर फ्रास की साझेदारी मे चल रही बम्बई की 'फ्राको' कपनी मे पहुँचा दिया जाता है। जो हेमोग्लोबिन के नाम से शीशियो मे बन्द रहता है जिसके ऊपर सतरो के चित्र चिपके रहते है। इस तरह व्यापारिक चाल चल, सरल-सीधे लोगो को जानवरो का खून पिलाया जा रहा है।

याद रखिए! ऐसे भयंकर पापप्रद कार्यों में जिनका किसी भी रूप में योगदान है, वे शिकार पाप के अधिकारी है, क्योंकि स्वयं शिकार करना, करवाना, अथवा करते हुए का समर्थन करना शिकार ही है। इस मायने मे जो मच्छर, मक्खी, खटमल, कॉकरोच आदि पर आक्रमण करते है, करवाते है व करने वाले का अनुमोदन करते है, वे इस महापाप के अंतर्गत आते है।

बर्बरता की हद

तीसरी बात है, सौन्दर्य प्रसाधनो मे बिज्जू, गिनी-पिग सुअर, वीवर, सील-मछली, व्हेल मछली, कछुआ सर्प, बाघ, शुतुरमुर्ग, भालू, कुत्ते, खरगोश, एव हाथी आदि को बे-रहम मार दिया जाता है। कस्तूरी मृग की तो कस्तूरी के कारण बडी दुर्दशा होती है भयभीत मृग-पत्नी शिकारी से कहती है– हे शिकारी! मुझे अभी मत मारो। मेरी सद्य प्रसूत सन्तान धान्य का ग्रास खाने से अनभिज्ञ है, वह मेरी राह देख रही होगी। मेरे न पहुँचने से वे सभी दु खी होगे। अगर तुम मेरा मास ही चाहते हो, तो मेरे स्तन छोड शरीर का सपूर्ण मास ले लो ताकि मै अपनी सतान को स्तन-पान कराती रहूँगी। धन्य है नारी जाति का मातृत्व-भाव।

तथापि दुखद यह है कि जो किसी का अपराध नही करते, किसी के अधीन नही है, भय से विह्वल हो भाग रहे है। शरीर मात्र जिनका धन है, ऐसे मासूम-मृग मनुष्य रूप जन्तु के द्वारा

नष्ट किये जा रहे है, तब अन्य प्राणियो की रक्षा की कथा ही क्या?

बेचारे निर्जन वन मे भ्रमण करने वाले मृग किसी दूसरे प्राणी को पीडा नही देते, उनका जीवन नष्ट नही करते, न किसी के धन को चुराते। साथ ही किसी व्यक्ति द्वारा रक्षित वस्तु पर अपने उदर के खातिर धावा नही बोलते। वे विपिन-विहित प्राप्त पत्तियो से अपना भोजन लेते है। जब भूपालक सरकार ही प्रजा का भक्षण करने लग जाय, तब भूतल पर इन सुकुमार प्राणियो की कौन रक्षा करेगा?

वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना हो

देवानुप्रिय! यदि तुम्हारे पैर मे कॉटा चुभ जाता है तो ऑखो मे ऑसू आ जाते है, और जब आप दूसरे का जीवन छीनते हो, तब उस पर क्या बीतती होगी। यदि परिवार का मुखिया किसी व्यक्ति की गोली/शस्त्र का शिकार हो जाता है, तब उसका घर उजड जाता है। बच्चे, दाने-दाने को मोहताज़ हो जाते है। ठीक वैसे ही जब आप किसी मूक प्राणी का शिकार करते हो, तब क्या उसके परिवार मे मातम नही छाता होगा? क्या परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्थाऍ तितर-बितर नही होती होगी? जिन्हे इस बात की खबर है, वे दूसरे की जीवन बगिया को कभी नही उजाडते।

जिस प्रकार आपको अपना जीवन प्रिय है, सुखेच्छा है। उसी प्रकार प्रकृति के प्रत्येक प्राणी को अपने प्राण-प्रिय है, कोई मरना नही चाहता। इस

हक़ीक़त से परिचित होने पर कानन के निर्दोष पशु-पक्षियो को दुख देना, प्राण लेना जायज नही है। वरन् विश्वम्भरा को अपना कुटुम्ब समझ भाई-चारे का सलूक उचित है।

हमे जानना होगा कि शिकार करने वाला मनुष्य महाभयकर श्वभ्रो मे बार-बार पीडित होता हुआ, बहुत भारी कष्टो का अधिकारी होता है। जैनाचार्य ने कहा है, हिसा मे आनद मानने, अनुभव करने वाले तीव्र रौद्र ध्यानी रौरव नरक भूमि मे सागरो पर्यन्त असह्य पीडा का भार वहन करते है। इस सदर्भ मे एक पौराणिक प्रसग है अवतिका देश का।

एक पौराणिक प्रसग

उन दिनो अवतिका मे सम्राट ब्रह्मदत्त का शासन था। जो अपनी आखेट प्रियता के कारण दूर-दूर तक कुख्यात था। उसे शिकार का जितना शौक था उतना इतिहास के पन्नो पर कभी किसी दूसरे का पढने/सुनने को नही मिला। वह शिकार के जितना निकट था, उससे कई गुना अधिक धर्म से दूर। वह धर्मद्रोही, क्रूर, दम्भी, नास्तिक, निर्दयी नृप प्रतिदिन शिकार खेलने जाता था। जिस दिन उसे शिकार मिल जाता उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहता। उसकी प्रसन्नता वैसा ही चटक रग लेती जैसे रक की प्रसन्नता चिन्तामणि रत्न पाकर। उसका हृदय बासो उछलने लगता। ऐसे भी दिनो का उसे मुख देखना पडता था, जब हाथ मलता निराश घर लौटता उसकी सारी खुशियॉ छिन जाती थी। प्रसन्नता का चटक रग धुॅधला हो जाता। बढती बेचैनी का चक्रव्यूह

ऑखो से निद्रा छीन लेता। सुन्दर सदन, सुरा, सुकोमल रूपसी सुन्दरियॉ, सगीत लहरियॉ, सुरम्य सामग्रियो के बीच भी वह किसी अनागत चिन्ता मे खोया सा रह जाता।

अरे रे यह क्या? कौन बैठा है यहॉ? क्रोध और आक्रोश मिश्रित वाणी ब्रह्मदत्त के मुख से एकाएक गरजी। क्या इसी के प्रभाव/जादू से मुझे शिकार नही मिल रहा है। आज वन प्रात मे आए मुझे चतुर्थ दिवस है। उस गहन अटवी मे एक दिगम्बर निर्ग्रन्थ सत समता की प्रतिमूर्ति पाषाण खड पर पद्मासन मुद्रा मे अचल ध्यानस्थ थे। देखते ही ब्रह्मदत्त का आक्रोश शिखर छू गया प्रतिशोध की भावना से।

इत्तफाक से मुनि योग/समाधि छोड आहार चर्या के लिये नगर की ओर आ गये और उस आखेट प्रेमी ने आखेट मे विघ्नकर्ता समझ उन मुनिराज के उस शिलाखण्ड को अग्नि से गर्म कर दिया। लौह सी तप्त शिला निरा/अकेली मानो उन्ही की प्रतीक्षित थी। मुनिराज नगर से लौट अपने सुनिश्चित स्थान पर बैठ गये। परिणाम यह हुआ कि देह जलने लगी। मुनिराज ध्यान मे अविचल खो गये। कुछ ही क्षणो मे अत कृत केवली हो अविनश्वर सुख के स्वस्थ्य धाम बन गये।

इधर सप्ताह भी नही बीता कि ब्रह्मदत्त के सर्वांग से कोढ बह निकला। उसकी पीडा चन्द्रकलाओ की तरह बढने लगी और इतनी विकट हो गई, कि एक स्थान पर बैठना अति दुष्कर हो गया। लोग घृणा से देखने लगे। ब्रह्मदत्त ने सोचा अब इस व्याधि से उभर पाना आसान बात नही और जीवित शरीर अग्नि



मे भस्म कर डाला। जिसका फल यह मिला कि आर्तध्यान से मरकर सप्तम नरक मे गया। आखेट जैसे एक व्यसन ने राजा ब्रह्मदत्त को अनन्त दु खो के सागर मे धकेल दिया। जहॉ उसे तैतीस सागर पर्यत छेदन, भेदन, यत्रो के द्वारा नष्ट किया जाना, अग्नि मे जलाया जाना आदि असख्य दु खो को सहन करना पडा।

(वर्ल्ड वाच सर्वेक्षण की रिपोर्ट का भी निष्कर्ष है, यदि शिकार शालाओ को अतिशीघ्र बन्द नही किया गया तो निश्चित ही दुनिया को दुर्भाग्यपूर्ण दौर से गुजरना होगा। अतएव, हितेच्छुओ को चाहिये कि वे अपनी बर्बरता से विराम ले।)

भारतीय सस्कृति की बिगडती हुई शक्ल को सुधारे और आर्थिक मानचित्र बदशक्ल होने से बचाये, अन्यथा मानवीय मूल्यो का चिन्दा-चिन्दा उड जायेगा।

इन तमाम तथ्यो को नजर अदाज न करते हुए शिकार का पुर-जोर मुकाबला करे, और जगत गुरू भारत के अहिसा प्रधान होने की प्रमाणिकता को पुन जीवित/जयवन्त रखे। वह जीवित तभी होगी जब मानव मात्र करूणा और कृपा से नहा उठेगा।

अत आइए! और व्यसन मुक्त जीवन जीने का प्राणपण/प्रमाणिक से कदम उठाईयेगा।



स्तेय : महानिषेधों का मारक

अदत्ता दान स्तेय'—विश्व मे जितने भी सूक्ष्म-स्थूल पदार्थ है। वे मात्रा मे चाहे अल्प हो या विपुल, निर्जीव हो या सजीव, किंतु जिनके आश्रित वे है अथवा उन पर जिनका स्वामित्व है, उन्हे, उनके स्वामियो की आज्ञा/अनुमति बिना ग्रहण करना स्तेय है। जो चोरी, डकैती, लूट, खसोट, रिश्वत व राहजनी आदि अनेक नामो से लोक प्रसिद्ध है।

चोरी-यह सामान्य-सा एक छिछला शब्द लगता है, लेकिन है बहुत विराट, गहन, गभीर, क्योकि इसकी भूमि मे हिसा के बीज अकुरित होते है। जनमतानुसार चोरी करना बुरा कृत्य है, अच्छी बात नही। इसके लिए सामाजिक, प्रशासनिक नियमो के साथ-साथ धार्मिक/ आध्यात्मिक नियम भी निहित है।

जैनाचार्य ने इसे पच महानिषेधो के मध्य मे रखा है, जिसके आगे अहिसा और सत्य दो पहरेदार है तथा पीछे भी ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह के रूप मे दो पहरेदार तैनात है। स्तेय से सत्य की हत्या तो होती ही है, साथ ही अहिसा भी चरमरा जाती है, घायल हो जाती है। आगे के दो पहरेदारो का सफाया कर जब 'स्तेय दैत्य पीछे मुडकर देखता है, तो उसके भयानक रूप को देख ब्रह्मचर्य भी अपने घुटने टेक देता है, कारण उसके सामने कुशील के उनचासो दैत्य लक्ष-लक्ष वासनाओ/इच्छाओ



के केश बिखराकर खडे है। ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के रथ पर बैठ भागना चाहता है, लेकिन अपरिग्रह रथ का 'अ' चक्र टूटकर दूर लुढका पडा है, कारण स्तेय द्वारा लाये गये परिग्रह का बेशुमार बोझ उस पर ढोया गया है। इस तरह मध्यम निषेध शकट मे जुते वृषभ की तरह है। बैल का जरा सा सतुलन बिगडा कि गाडी और गाडीवान की खैरियत नही। इसी तरह अस्तेय हिला कि चारो निषेध चारो खाने चित।

धैर्यवान होना आवश्यक

आखिर यह स्तेय जन्म क्यो लेता है? क्या इसके बिना सृष्टि का कर्म चक्र नही चल सकता? माना कि जीवन के साथ जिजीविषा उसके हर अस्तित्व, हर स्तर के साथ जुडी है। पर इसका अर्थ यह तो नही कि वह अस्तित्व के साथ स्तेय को भी जोड ले। भूल को समझने की ईमानदारी यदि इसान के खून मे अपना अस्तित्व बनाये रक्खे, तो कोई कारण नही कि उसकी समस्या का निदान न निकले/मिले। कठिन से कठिन समस्या का समाधान आहिस्ता-आहिस्ता निकल आता है, क्योकि जहॉ चाह वहॉ राह तो है ही, लेकिन आज मनुष्यो मे इतना साहस कहॉ जो धैर्य रखे। धैर्य रखेगे तो मनचीता समय पर मिल सकेगा। लोकनीति है–

कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर।
समय पाय तरूवर फले, कैतिक सीचो नीर।।

आवश्यकताओ के चक्रव्यूह मे अभिमन्यु

समय और परिस्थितियो के साथ मानव मन मे सुविधा,

आवश्यकता आसक्ति, अह, ईर्ष्या, महत्त्वाकाक्षा और प्रतिष्ठाएँ पनपने लगती है, और वह इनसे प्रभावित हो राग-द्वेष के तानो-बानो से निरतर जल मे फैलती स्याही की तरह आवश्यकताओ का जाल बुनता चला जाता है। सब अभिमन्यु की सताने है, जो आवश्यकताओ के चक्रव्यूह मे घुसना तो जानती है, कितु निकलना नही। अपनी हैसियत और शक्ति से वस्तुओ को प्राप्त करने की अतृप्त अभीप्सा जब उन्हे आवश्यकताओ की परिधि मे खीच ले जाती है तब उनकी जिस किसी प्रकार से वस्तु प्राप्त करने की इच्छा और अधिक बलवती हो उठती है, और वह उस बिदु पर पहुँच जाता है, जहाँ से वह चोरी का उपक्रम शुरू कर देता है। इस उपक्रम की एक विशेषता है, यदि इसान अपने कार्य मे सफल हो गया तो धीरे-धीरे वह स्तेय को औचित्य देने लगता है। आगे जाकर वह उसका अपरिहार्य कर्म बन जाता है।

एक प्रेरक घटना

आवश्यकी चोरी/आदतन चौर्य का चोला पहिन जब व्यसन के रूप मे बदल जाती है तब चोर यह भूल जाता है कि 'सुख-सुविधा की लालसा लिये मै दु ख की ही सामग्री एकत्रित कर रहा हूँ।' एक प्रेरक घटना है।एक दिन एक बालक ने स्कूल मे अपनी कक्षा के बालक की कलम चुराई जिसे घर पहुँच उसने अपनी माँ को दिखाया। कलम देख माँ के मन मे लालच आ गया। माँ बडी प्रसन्न हुई। गलती पर बालक को न डॉट पडी, न उस पर हाथ उठा। बस, फिर क्या था! यही से उसमे चोर कर्म के सस्कार का शिलान्यास हो गया। माँ का मौन प्रोत्साहन पा,

बालक का हौसला बढ गया। अब वह जब चाहे किसी बालक की कलम, कॉपी, पुस्तक, चप्पल, स्कूल की चॉक आदि छोटे-बडे मित्रो और गुरूओ की ऑख बचाकर लाने लगा। उसकी यह आदत स्कूल तक सीमित न रही। आहिस्ता से उसकी अगुली पकड पास-पडौस के घरो तक उसे खीच ले गई। आये दिन जिस किसी के घर से वहाँ के सदस्यो की ऑख बचा कभी पैसे, कभी कोई वस्तुएँ आदि चुराकर लाने लगा। मॉ ने एक दिन किसी महिला की शिकायत पर उसे डॉटा, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। उसकी आदत ने उसके भीतर पनाह पा, अपना इतना लबा-चौडा घर बना लिया कि वह कब किस कमरे मे घुसा बैठा रहे पता नही लगता था। पास-पडौस से बात उडती-उडती आस-पास के गॉवो मे फैल गई। अब वह एक छोटा सा चोर नही रहा, अपितु एक खूखार लठैत, डकैत के रूप मे कुख्यात हो गया। यदि उपवन के सभी फूल समान नही होते, तो किसी के दिन भी एक जैसे नही होते। मूँछे सदा एक सी नही रहती, कभी ऊँची तो कभी नीची। और अब उस डकैत की मूँछ नीची होने के दिन आ गये। वह एक दिन रगे हाथो पकडा गया। फलत उसे कारावास भेज दिया गया।

कुछ दिनो पश्चात सिर धुनती हुई मॉ उससे मिलने जेल पहुँची। जेल के नियमानुसार वह सलाखो से बाहर थी और बेटा भीतर। मॉ को देखते ही बेटे का खून खौल पडा। अधीर होते हुए चीख पडा मॉ । मेरे निकट आओ मै तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ। मॉ निकट सरक गई और सलाखो के बीच कान सटा बेटे की बात सुनने का प्रयत्न करने लगी। इस बीच बेटे

ने मॉ का कान जोर से मुख मे भर/काट/दिया। खून बह निकला। मॉ चीख पडी बे टा यह क्या? मै तो तुझे देखने आई थी। बेटा बोला आज मै तेरी बदौलत जेल मे हूँ। जिस दिन मै मित्र की कलम चुराकर लाया था, यदि उस दिन तू मुझे रोक/डॉट देती तो मै आज इस स्थिति मे ना पहुँचता। मेरी चोरी की आदत को बढावा देकर ही तूने ही उसे व्यसन का चोला पहना मुझे यहॉ लाकर खडा किया है। जिसका प्रायश्चित मै आज कर रहा हूँ।

इस तथ्य को बहुत कम लोग समझ/स्वीकार पाते है कि जिनको इस निदनीय कर्म करने की आदत पड़ जाती है, वे धन-संपत्ति युक्त होते हुए भी तीव्र लोभ से अभिभूत हो आपदाओ के जाल मे फॅसते चले जाते है।

द्रव्य एवं भाव प्राणो का हरणकर्ता

चोरी प्रकारातर से हिसा है। हिसा ही नही, निदर्यता की पराकाष्ठा भी है। यह जगल की आग की तरह चोर एव धन के मालिको को लबे अर्से तक जलाती रहती है। कारण जब चोर किसी वस्तु पर अपना आधिपत्य जमाता है तथा वास्तविक अधिकारी को उसके अधिकार से वचित करता है, तब चौर्य कर्मी न केवल अपनी स्वच्छ-विमल आत्मा पर कल्मष कालिख पोतता है, अपितु अपने क्रूर कृत्य से उस परिवार, समाज एव आस-पास के गॉवो एव सगे-सबधियो मे दु ख एव आतक के बीज वपित कर देता है। उनकी भाव हिसा, द्रव्य हिसा/प्रतिहिसा

के लिये भडक उठती है। सारा का सारा शात वातास खौल उठता है। चूँकि प्राणियो के प्राण धन के निमित्त से ठहरते है। उस धन की चोरी हो जाने से उन्हे जितना दु ख होता है उतना प्राय मृत्यु के समय भी नही होता। अस्तु, स्पष्ट है जो किसी के धन को चुराता है वह प्रकारातर से उसके द्रव्य एव भाव प्राणो का हरण करता है/लूटता है।

यथार्थता तो यह है कि औपचारिकता एवं मौतिकता की आधा-धापी मे आम आदमी इतना लिप्त हो गया है कि धर्म और विवेक की अवहेलना करना उसका स्वभाव-सा बन गया है। सच है, भौतिकता के घुप्प अंधेरे मे जीने वाला धर्म का मूल्यांकन नही कर पाता। उसे तो इच्छा पूर्ति के लिये रुपया चाहिये, चाहे जैसे भी मिले।

आवश्यकता और अपव्यय की असमानता

आसक्ति और आवश्यकताओ की तरह शोषण और दरिद्रता भी अस्तेय भग के प्रमुख कारण है। कही अपव्यय हो रहा है, तो कही खाने के लाले पडे है। कही बच्चा दूध नही पीता इसलिए डॉटा/पीटा जा रहा है, तो कही बच्चे दूध की बूँद-बूँद को तरस रहे है/रो रहे है इसलिए उन्हे डॉटा/पीटा जा रहा है। किन्ही के भव्य प्रासादो से इठलाता हुआ वैभव झॉक रहा है, तो किसी के घर की दीवारे उसकी कगाली पर रो/बिलख रही है। कही इतना धन सचित हो गया है कि घर मे रखने की जगह नही

है, तो कोई भूख की ज्वाला शात करने बाबुओ के सामने हाथ फैला रहे है। अपने भूखे पेट को दिखा तुम्हे गुहार रहे है। आज मानव केवल धन सग्रह मे लगा है दूसरे से बेखबर होकर। यदि देश में सकलित वस्तुओ/धन का समुचित वितरण नही होगा, तो निश्चित ही धनहीनो मे चोरी के भाव जागेगे/जागे भी है। प्रस्तुत है एक घटना—

एक घटना

चीन मे एक विचित्र किंतु सम्यक विचारो का समर्थ विचारक हुआ। जो एक बार राज्य का कानून मत्री बनाया गया। कानून मत्री होते ही प्रथम दिन ही इत्तफाक से चोरी का एक मुकदमा उनके सम्मुख आया। एक आदमी ने चोरी की थी, वह चोर की हैसियत से माल सहित पकड कर कानून मत्री के सामने पेश किया गया था। उसने स्वीकार लिया हॉ, मैने चोरी की है। उस विचारक ने चोर की बात को बडे ध्यान से सुना और कहा मै तुम्हे जरुर दण्ड दूँगा। फैसला हुआ, निर्णय लिखा गया- चोर और साहूकार दोनो को छ-छ माह की सजा। चोर को सजा सबने सुनी थी पर यह पहला प्रसग था जब लोगो ने साहूकार को सजा सुनी। वहॉ के वातावरण मे सन्नाटा छा गया। चुप्पी तोडते हुए साहूकार बोला- 'मत्री जी आप होश मे है कि नही? आपका दिमाग तो ठीक है? कही आप पागल तो नही हो गये? कही आप कुछ पी कर तो नही आ ये। आपने तो दुनिया का रिकार्ड ही तोड कर रख दिया। 'साहूकार को दण्ड मिले ऐसा कही आज तक देखा सुना गया है? मत्री जी ने कहा-नही, इसलिए तो दिन-प्रतिदिन ये नौबते बढती जा रही

है। जब तक सिर्फ चोरो को सजा मिलती रहेगी, तब तक दुनिया मे कभी चोरियाँ बद नही होगी। आज तक यही तो होता आया है। आपने सारे गाव की सम्पत्ति एक कोने मे इकट्ठी कर रखी है, अब गाव मे चोरी नही होगी तो क्या होगी? आदमी कितने दिन तक चुप रह सकेगे? चोरी नही यह उनकी मजबूरी होगी। मै दोनो को दण्ड दूँगा, क्योकि चोर पीछे पैदा होते है, पहले शोषण। फिर शोषण से जन्मती है चोरी/स्तेय।

चोरो का सृजक एव सहयोगी-समाज

यह जितना सत्य है, उतना तथ्य भी है कि चोर इतने पापी नही होते, जितने कि चोरो को पैदा करने वाले। तुम स्वय चोर हो, चोरो के जनक हो, पालक हो। अब इनके लिये सजा दिलाने का क्या अधिकार? इन्हे चोर कहने का क्या अधिकार? क्या कभी किसी पिता ने अपने पुत्र को चोर कहा है? या अपने को चोर का बाप कहलाना पसद किया है। निकम्मे, निठल्ले, कुरूप बेटो का निर्वाह तो उनके माता-पिता फिर भी कर लेते है, लेकिन चोरी रूपी काली स्याही जिसने अपने मुख पर पोत ली है, ऐसे चोर पुत्र को कोई प्रश्रय देने को तैयार नही होता क्योकि आस्तीन मे छिपे विषधरो का क्या भरोसा? चोरी से उपार्जित सम्पदा की अपेक्षा चिरकाल तक रहने वाली दरिद्रता श्रेयस्कर है, क्योकि विष सहित दुग्धपान से जल मिश्रित छाछ पीना उत्तम है। श्रेष्ठ है। 'गुण रूपी पुष्पो से गुम्फित कीर्ति रूपी हरी-भरी सुरभित/प्रतिष्ठित माला चौर्य कर्म की कठोर अर्चिष से झुलस जाती है। चोरी करने वाला दो टके की चोरी क्यो न करे वह प्रतिपल शकित एव भयभीत रहता है। कही कोई

पकड न ले यह आशका उसे न निशक घूमने देती है, न ही खाने देती, न सोने देती है। फिर भी बडी विचित्रता है, कि यह स्तेय किसके साथ ऑख मिचौनी नही खेलता? कौन उसके प्यार से रीता है? किसने उसके सहारे को ठुकराया है? कौन उसकी गली मे नही जाता? एक मात्र अचौर्य महाव्रती एव अणुव्रती सकल्पी के अलावा। अस्तेय व्रत का पालनकर्ता भविष्य मे मिलने वाली चीजो के चक्कर मे नही पडता। चोरियो के मूल मे लालच की लाडली बेटी इच्छा का ही हाथ होता है।

स्तेय अलग-अलग अभिव्यक्तियॉ

ज्ञातव्य है। चोरी और स्तेय है तो पर्याय शब्द, किन्तु अभिव्यक्तियॉ अलग-अलग किस्म की है। ताला तोडना, किसी वस्तु को उसके मालिक की आज्ञा बिना लेना, लावारिस वस्तु का आहरण करना, चोरी के प्रयोग बतलाना, चौर्य वस्तु का क्रय-विक्रय करना, उनका समर्थन, हीनाधिक मानोन्मान रखना, टेक्स, कस्टम की चोरियॉ आदि सब चोरी के अतर्गत आते है। यहॉ तक समझना तो अपेक्षाकृत सरल है, किन्तु अस्तेय इससे बहुत आगे बढ जाता है। इसमे आवश्यक-अनावश्यक सार्थक सदर्भ मे से निरर्थक की छॅटनी अत्यन्त अनिवार्य होती है। जिस वस्तु की जरूरत नही है। उसे जिसके अधिकार मे वह है, उससे उसकी आज्ञा पूर्वक लेना भी स्तेय है। इस तरह की प्रवृत्ति प्राय कर पहनने/खाने की चीजो मे होती है। जैसे आपका चार पैन्ट-सूट/साडियो मे काम चलता है, फिर भी बीस पैन्ट-सूट/ साडियॉ रखते है अथवा उम्र के मान से भोजन मे मीठा/नमक की आवश्यकता नही है फिर भी खाये जा रहे है। वस्तुत मानव

अपनी आवश्यक वस्तुओ को एव उनकी मात्रा को जानता नही है, तो भी उन्हे कई गुना अधिक बढाये जा रहा है। इसलिए अनायास ही चोर की परिगणना मे आ जाता है और जब वही विचार पूर्वक सोचता है, तो ज्ञात होता है कि मै अपनी बहुत सारी आवश्यकताओ को घटा/सीमित कर सकता हूँ। इस प्रकार अस्तेय के माहात्म्य को समझ जो व्यक्ति उत्तरोत्तर जरूरतो को निर्जीर्ण करता जाता है। वह सुखी और सपन्न हो आनद का अनुभव करता है। इसी सदर्भ मे एक सस्मरण–

संस्मरण

सन् १९९२ मे जब मेरा वर्षायोग बावनगजा मे चल रहा था, उस समय आसाम से एक मारवाडी सेठ आये और कुछ दिन तक रहे, प्रवचन सुने, पूजा-उपासना की। जाते समय कहा गुरुदेव! मुझे कुछ ऐसा समीकरण-सूत्र दीजिए जिससे मुझ पतित के जीवन मे आनद की लहर आ जाये। मैने कहा-हे भव्य प्राणि! अगर आत्मा का हित चाहते हो तो चोरी (जो व्यसन रूप तेरे साथ जुडा है।) का परित्याग कर दो, कल्याण हो जायेगा। मारवाडी सेठ मन मे विचार करता है कि बात कैसे बनेगी। व्यापार मे तो सतत् चोरी ही करना पडती है कभी कस्टम, कभी ड्युटी अनेक तरह की। वह दूध मे पानी की तरह रक्त मे घुल-मिल गई है। परन्तु गुरुदेव का आदेश है- न्याय नीति से जीवन का निर्माण करना, निर्वाह तो पिपीलिकाऍ भी कर लेती है। यह बात उस सेठ के दिमाग मे बैठ गई। उसने दो नम्बर का पूरा काम बन्द कर दिया। जिसका प्रभाव यह हुआ कि छ माह होते-होते व्यापार दूना हो गया। साथ ही सेठ का अतर मन गद्‌गद् हो गया। उसने चौर्य व्यसन से सदा-सदा के लिये विरक्ति ले ली।

आपसे भी अपेक्षा है कि आप अपने चित्त मे बैठी दासता को हटायें। भ्रमभूत को बाहर निकालें और निहायत पवित्र देव समूह के द्वारा सदा पूजित, संसार दुःख को नष्ट करने में अत्यंत समर्थ जिनेन्द्र प्रतिपादित शुद्ध अचौर्य व्रत का पालन करे।



परस्त्री प्रेम : आपत्तियों का आस्पद

पर नारी पैनी छुरी, तीन ठौर से खाय।
धन छीनै यौवन हरे, मरे नरक ले जाय।।

परनारी से कौन अपरिचित है? जो इसे पाप दृष्टि से देखता है, वह परमात्मा के क्रोध को भडकाता है और स्वय अपने हाथो नर्क का मार्ग साफ करता है।

जिसके साथ धर्मानुकूल विवाह सस्कार हुआ है वह है स्वस्त्री, शेष स्त्रियॉ परस्त्रियॉ कहलाती है। जो परिगृहीत और अपरिगृहीत की अपेक्षा से दो प्रकार की स्वीकृत है। प्रथम वे स्त्रियॉ, जो किसी पुरुष द्वारा विवाहित है, फिर चाहे वे सम्प्रति मे उस पुरुष द्वारा गृहीत हो या त्यक्त, परिगृहीत कहलाती है। द्वितीय वे जो अविवाहित है। (चाहे वे कुमारी कन्याऍ हो या कि अभिसारिकाऍ) अपरिगृहीत कहलाती है। स्वस्त्री के अतिरिक्त दोनो प्रकार की परस्त्रियॉ वर्जनीय है। ससार मे अनेकानेक लडाइयॉ है, जिनमे कामाभिलाषा के साथ होने वाली लडाई सबसे ज्यादा कठिन है। सिवाय अतिबाल तथा अत्यत वृद्धावस्था के, कोई भी अवस्था अथवा समय नही जब मनुष्य इनसे मुक्त हो। मनुष्य के अदर अति वासना का होना इस बात का प्रतीक है कि वह ईश्वरीय, शारीरिक, धार्मिक, नैतिक व राजकीय कानून का पालन नही कर पा रहा है। आचार्य कहते है कि गृहस्थ

धर्म के नाते स्वपत्नी का उपभोग सतानोत्पन्न धर्म पुरुषार्थ पूर्वक जायज है, न्यायोचित है। केवल कामपिपासा बुझाने हेतु अपनी धर्मपत्नी के साथ किया गया समागम भी पाप है, व्यभिचार है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार आवश्यकता से अधिक खा लेना या विष खाकर प्राण दे देना। इस परिभाषानुसार मनुष्य से पशु कही अधिक श्रेष्ठ है, क्योकि पशु केवल उसी समय मैथुन कर्म करते है जब उन्हे सतान पैदा करनी होती है।

अज्ञानी विषयी मनुष्य की कोई सीमा सारणी नही होती और शायद उसने इस मत का भी आविष्कार कर लिया है कि यह एक आवश्यकता है। इस आविष्कृत आवश्यकता के कारण वह गर्भ तथा शिशु पालन की अवस्था मे भी स्त्री को अपनी रमणी बनने के लिये विवश करता है, उसके जीवन के साथ खिलवाड़ करता है।

परस्त्री-नरक का दूसरा द्वार

दूसरी बात यह है कि स्वस्त्री का भी अधिक मात्रा मे उपभोग करने वाला व्यक्ति अधिक 'शुक्र' शक्ति क्षय हो जाने से असमय मे वृद्ध या नपुसक हो जाता है, क्योकि शुक्र क्षय होते ही शरीर मे वर्तमान शेष छ धातुएँ रस, रुधिर, मास, मेद, मज्जा और अस्थि भी शीघ्र नष्ट हो जाती है, अत मूल धातु के रक्षणार्थ परस्त्री सहवास सर्वथा वर्जनीय है। परस्त्री गमन से इस लोक मे चिता, आकुलता, भय, द्वेष, बुद्धि विनाश, सताप,

भ्राति, भूख, प्यास, अघात, रोग और मरण रूप जो लौकिक दु:ख प्राप्त होते है, उसे ज्ञानियो ने उसके फल कहे है जिनके दारुण दु ख नरको मे फल रूप मे फलते है। महाभारत के शाति पर्व मे श्रीमन्नारायण अर्जुन को सबोधित करते हुए कहते है- हे पार्थ! '**द्वितीयं नरक द्वारं पराङ्गना सेवनं।**

जब कोई परस्त्री सेवी या मास भक्षी श्वभ्र के धरातल पर उतर जाता है, तब दाह या सताप उत्पन्न होने पर शाति लाभ की मृगी आशा मे वह वैतरणी मे कूद पडता है। उस नदी के रुधिर युक्त, उष्ण एव क्षार जल से उसका सारा बदन जल जाता है। वह हाहाकार करता हुआ जैसे ही भागता है उसे त्वरित अन्य नारकी पकड लेते है एव घसीटते हुए काले लोहे से निर्मित नील मण्डप मे ले जाकर बलात् तप्त लौह प्रतिमाओ से गाढ आलिगन कराते है। उसे स्मरण दिलाते है, पूर्व भव मे तूने गुरुजनो के हितकारी वचनो की अवहेलना उपहास कर परस्त्री का उपभोग किया था, ले! अब इन्हे भोग और कर्म विपाक को भोग। अरे! तू क्यो रो रहा है। इस तरह वह लम्पटी पुश्चली प्रेमी सागरो पर्यंत मर्मान्तक वेदना उठाता है। जो शील भग का स्थान परस्त्री को देखकर सेठ सुदर्शन की तरह क्लीव बन बैठता है अथवा भाग खडा होता है, वही अपने शील रत्न की सुरक्षा कर पाता है। कहा भी है जो चोरो-को दूर से देखकर अपना रास्ता बदल देता है, वह चोरो द्वारा कहाँ/ कैसे लूटा जा सकता है?

परस्त्री, अपने से नेहा जोडने वाले के जीवन को कबूतर की भॉति न केवल उजाडती है, वरन् समूचे जीवन को अजगरी की तरह निगल जाती है। क्या आपने दुष्ट दृष्टिविष वाली सर्पिणी

के स्पर्शकर्त्ता को मरते हुए नहीं देखा है? विषवृक्ष की जड मूर्च्छित ही नही करती, प्राणो की भी ग्राहक बन जाती है। आइये! आपकी मुलाकात विज्ञान आकाश की उस ज्वलत ज्योति से करा दूँ, जिसे वासना की ऑधी ने इक्कीस वर्ष की कच्ची उम्र मे सदा-सदा के लिये बुझा दिया।

एक प्रेरक प्रसग

आधुनिक गणित मे सबसे ज्यादा उज्जवल नाम समूह शास्त्र के शोधक फ्रेंच विद्वान गालोआ का है। बेहद दु ख की बात यह है कि उसका दु खद अत असयमी व्यवहार का परिणाम था। स्कूल मे उच्छृखल, घर मे झगडालू समाज मे बदनाम। दो बार जेल यात्रा कर आया। जेल मे ही गणित का बहुत कुछ सशोधन कार्य करता रहा। एक बार जेल मे बीमार पड गया। चिकित्सा के लिये उसे चिकित्सालय लाया गया। वहॉ कुछ दिनो मे शरीर से तो स्वस्थ्य हो गया, लेकिन मन एक परिचारिका से घायल हो गया। वह विवाहित थी, गृहीत परनारी। उससे गालोआ का अनुचित सबध हो गया। भनक जब उस स्त्री के पति के कानो मे पडी, तो उसने गालोआ को द्वन्द्व-युद्ध के लिये ललकारा। वाक्‌युद्ध, हस्त युद्ध हुआ और इसी बीच एक गोली उसकी छाती को चीरते हुए निकल गई। अब क्या था, जो होना था सो हो गया। अब होने को अवशेष ही क्या रह गया था' दूसरे दिन उसका करुण निधन हो गया। मृत्यु से पूर्व रात्रि मे उसने अपने मित्रों को दो पत्र लिखे थे, जो कि मानव जाति के इतिहास मे बेजोड लेख थे। एक मे उसने गणित सबधी अद्‌भुत शोध को सक्षेप मे स्पष्ट कर किसी विशेष विख्यात गणितज्ञ के पास पहुँचाने

की प्रार्थना की थी, जो कि आज उच्च गणित की शाखा 'अरुप बीज गणित' के नाम से पहचानी जाती है। उसकी रूपरेखाएँ, प्रक्रियाएँ उस पत्र मे थी। दूसरे पत्र मे गालोआ ने अपना दिल खोलकर रख दिया था- 'एक अधम कुलटा नारी के पाप के कारण मै मर रहा हूँ। मेरा जीवन एक करुण प्रहसन बन कर नष्ट हो रहा है। इतनी युवावस्था मे इतनी सी तुच्छ वस्तु के लिये मरना और अदुभुत शोध शेष छोडकर मरना, कितने तिरस्कार की बात है?'

काश! वह बीस वर्ष तक और जीवित रहता तो गणित के इतिहास मे नियमत कुछ नए प्रवाह ही बहे होते। देखा आपने! सयम के अभाव मे मनुष्य इतना विकृत हो जाता है जिसकी कल्पना भी शरीर के रोये-रोये, रेशे-रेशे कपा देती है। जिसकी रूह या आत्मा पर वासना का गुप्त हमला होता रहता है, उसके जीवन के शेष कार्य कभी निश्शेष नही हो पाते। उसके जीवन का मापदण्ड गिर जाता है। परवनिता का लालच जब भीतर की वासना से हाथ मिलाने को तैयार हो जाता है तब मित्र भी उसके शत्रु बन जाते है।

परांगना का सम्पर्क-एक भूल भुलैया

ये परस्त्रियॉ प्रथम नम्र भाव से सुख देने और सेवा कर इस जन्म मे तो क्या नौ-नौ जन्मो तक साथ-साथ रहने का यकीन दिलाती है। लेकिन ! मौका देखते ही ढोग रच लेती है। उद्धत बन आदमी के हृदयासन पर बैठ जाती है। अगर इस चाकरिनी को अपने मन मदिर मे पैर रखने दोगे तो उसके गुलाम

बनने की बारी तुम्हारी ही आ जाएगी। ये चादी की बेडियाँ हैं, सोने का पिजरा और है राजमहल का कारावास। इनकी दासता की कहानी बडी दु:खद कहानी है। इनसे जो खुराक मिलती है वह आपकी भूख तो मिटा ही नही सकती अपितु उल्टी और बढा ही देती है। इनके तरह-तरह के नाज-नखरे, नित नवीन कहे जाने वाले आकर्षण व्यक्ति को कही शाति नही पाने देते। इनके ससर्ग से जिस घर मे सुख-चैन की वशी बज रही थी, वही अब करूण-क्रन्दन सुनाई देता है। परागना का सम्पर्क ससार की भूल-भुलैयो मे भटका देता है और अत मे मजदूरी चुकाते समय वेतन के रूप मे केवल खोटे सिक्के के रूप मे दु:ख, आपदा, कष्ट, त्रासदी ही मिलती है।

जीवन के उपवन का प्रखर झंझावात

परनारी और परपुरुष के अवैध सबध मे खटपट की गध आती ही रही है। रात हो या दिन, एकात हो या जन-समूह, समय हो या बेसमय, भोजन का वक्त हो या निद्रा का, इनका सग्राम चलता ही रहता है। कभी-कभी तो युद्धविराम ही नही होता और न ही सधि पत्र पर उनके हस्ताक्षर होते है। यदि हस्ताक्षर होने ही है, तो अदालत के कटघरे मे आपने-सामने खडे होकर तलाक पत्र पर। ज्ञातव्य है परनारी का प्रेम जिस तरह तुम्हे मुकुट पहनायेगा, उसी तरह सूली पर भी चढाने मे नही चूकेगा। जिस तरह वह तुम्हारे विकास के लिए है, उसी तरह तुम्हारी कॉट-छॉट के लिए भी। वह आपके मधुर जीवन मे आकर न केवल मधुर स्वप्नो को चकनाचूर करने वाली कर्कश आवाज़ है, अपितु जीवन के उपवन को उजाडने के लिए प्रखर झझावत भी है।

परस्त्री-मायावी रूप

शायद आप परस्त्री की प्रकृति से परिचित नही हो। वह आपके जीवन मे प्रविष्ट होकर तुम्हारी ऊँचाइयो तक चढ, सूर्य की किरणो मे कॉपती हुई तुम्हारी कोमलतम कोपलो की देखभाल भी कर सकती है, तो वह किसी समय तुम्हारी गहराइयो तक उतर मनो भूमि मे दूर, बहुत दूर तक फैली/गडी जडो को भी झकझोर सकती है। जो नारी/दुराचारिणी अपने जार के लिए पवित्र विवाह दीक्षा से उपात्त सर्वसम्मत पति रूप परमेश्वर को मार सकती है/ डालती है। वह दुष्टा/कुलटा अवसर आने पर जार को भी मार सकती है/ मार डालती है। क्या यह सच नही है कि जो बिल्ली स्वय के बेटो/बच्चो को खा जाती है, क्या वह चूहो और उनकी वश परपरा को छोड देगी?

यह सच है। अनाज की बालियो की तरह वह अपने प्रेम मे आसक्त कर तुम्हे अपने अदर तक समा लेती है, परतु यह भी उतना ही सच है कि समय पाकर तुमसे तुम्हारी भूसी को स्वय तुमको धन वैभव और मान इज्जत सहित लूट कर नगा छोड देती है। अपने पति की त्यक्ता का विश्वास कैसा? विश्वास बिना स्नेह कैसा? और तब स्नेह के बिना सुख की कल्पना कैसी??? परललना लम्पटी का तो सुख के स्थान पर अपयश फैलता है और होती है 'कुलाल कुसुमो द्वारा उसकी पूजा।' आश्चर्य और अफसोस तो तब होता है जब आयरन मेन या लौह पुरुष कहलाने वाला पुरुष, लोहा लेने की बजाय दो टके की छोकरी के सामने अपने घुटने टेक देता है। नारी सम्बन्धो की पवित्रता के रूप मे उसके सारे सबध पवित्र धागो मे बधे हुए होते है।

यदि हम उम्र है तो भगिनि, बडी है तो मॉ, छोटी है तो बेटी, बडे भाई की पत्नी है तो पूज्या भाभी के रूप मे मॉ समान छोटे भाई की पत्नी है तो बहू, बेटी। फिर उससे अनुचित सबध क्यो? और कैसा? इसी प्रकार नारी के लिए हम उम्र-भाई, बडा-पिता, छोटा है तो पुत्र की तरह होना है इसी सदर्भ मे यहॉ 'रामचरित मानस' के सुन्दरकाण्ड की ये पक्तियॉ सामयिक है-

जो आपन चाहै कल्याणा,
सुजसु, सुमति, सुभ गति, सुख नाना।
सो परनारि लिलार गोसाई
तजउ चउथि के चद कि नाई॥

हे स्वामिन्! जो मनुष्य अपना कल्याण, सुन्दर यश, सुबुद्धि, शुभ गति और नाना प्रकार के सुख चाहता हो, वह परस्त्री के ललाट को चौथ के चन्द्रमा की तरह त्याग दे (अर्थात जैसे लोग चौथ के चन्द्रमा को नही देखते, उसी प्रकार परस्त्री का मुख भी न देखे) जैसा कि लक्ष्मणजी पर आसक्त होने वाली शूर्पनखा ने लक्ष्मण की अनिच्छा जान राम से प्रस्ताव रखा। श्री राम ने कहा हे भद्रे! तू मेरे छोटे भाई पर अनुरक्त होने के कारण मेरी पुत्रीवत् है मै तुझे कैसे स्वीकारूँ। पुन लक्ष्मण जी से निवेदन करने पर उन्होने भी वही उत्तर दिया हे पूज्या! मेरे भाई पर अनुराग दृष्टि और प्रणय निवेदन से तू मेरी पूज्या भाभी सीता समान मॉ हो गई। मै तुझे किसी भी स्थिति मे स्वीकार नही कर सकता। इतने पवित्र सबधो के होते हुए भी आखिर इनकी तरफ बुरी निगाह क्यो हो रही है? आखिर इन सबका जिम्मेदार कौन है? आप स्वय ही ! या आपके अदर बैठा पिशाच।

ब्ल्यू फिल्मे- राष्ट्र के मुख पर कालिख

आए दिन समाचार-पत्रो मे सुनने/पढने मे आ रहा है कि युवक-युवतियॉ जीवन के सबसे नाजुक वक्त मे शादी से पूर्व गलत सबध स्थापित कर न केवल भारतीय सस्कृति को लाछित कर रहे है, अपितु कुमारी मॉ की कोख को बूचडखाने मे बदल रहे है। वह नन्ही कली धरती पर खिलने से पूर्व तोड-मरोड दी जाती है। अस्तित्वहीन कर दी जाती है यह सब क्या है? नि सदेह यह सब हमे जो दिख रहा है, लोग कर रहे है, यह है ब्ल्यू फिल्मो का प्रभाव। जो परिवार समाज और राष्ट्र के मुख पर कालिख पोत रही है। क्या आप ऐसी महामारी का स्वागत करेगे? और ब्ल्यू फिल्म लाकर अपने परिवार मे देखेगे, दिखाएँगे?

चलचित्रो का अनुसरण

अफसोस है कि सत्तर-सत्तर वर्षीय वार्धक्य से जर्जरित दुनियावी लोग अपनी गोद मे नन्हे-मुन्हे पोते-पोतियो को बिठा कर बडे इत्मीनान के साथ युवाओ, किशोर बच्चो, बेटी और बहुओ के साथ रगीन चलचित्रो को देखते है। टी वी छोडने के लिए उनका मन गवारा नही करता। कैसी विडम्बना है इन्द्रियॉ शिथिल और मन हरा-भरा हो रहा है? यही कारण है आज लोगो का मन चलचित्रो से चलित हो परनारी पर-पुरुष की ओर अनायास आकृष्ट हो जाता है। अपनी कामना पूर्ति के लिए चलचित्रो मे दिखाए गए प्रयत्नो को जीवन मे साकार रूप देने के लिए जोशीले प्रयत्न मे अपना और दूसरे का बसा-बसाया

घर उजाड देते है। आश्चर्य है! कौआ पूर्ण जल से भरे हुए तालाब के रहते हुए भी घडे का ही पानी पीने उत्सुक रहता है।

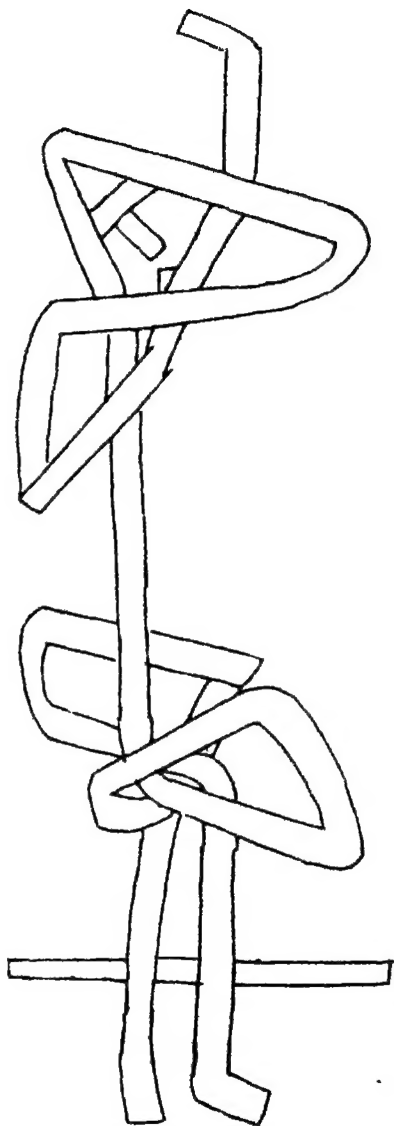
परस्त्री प्रेम-आपत्तियो का आस्पद

ज्ञात रहे स्वदार की अपेक्षा परदार सेवन मे तीव्राभिलाषा होती है इसलिए तीव्र अशुभ कर्म का बध होता है। यद्यपि दोनो के साथ क्रिया एक ही है, लेकिन पात्र भेद से परिणामो मे अतर होता है। कारण उसमे भय, तीव्र लालसा, एकात के लिए चोरी आदि भावनाएँ सन्निहित होती है, जिसमे कर्मबध मे भी अतर पडता है। इस तरह परस्त्री/प्रेमी कर्म बधन की परपरा मजबूत कर धन, कुल और सर्वनाश के साथ-साथ उपहास का पात्र बन आगामी जिदगी मे कुरूप, दुर्गंधयुक्त निदनीय, सौभाग्यविहीन, कुष्ठ रोगी तथा विकलाग होते है। इस प्रकार परस्त्री का प्रेम आपत्तियो का आस्पद है।

अत हे बधुओ! तुम कोई भी अपराध करो, कैसा भी पाप करो फिर भी तुम्हारे पक्ष मे यह श्रेयस्कर है कि तुम प्रतिवेशिनी अर्थात् पडौसी स्त्री से सदा दूर रहो। समय रहते चाकरी को न छोडा गया तो बुरे परिणाम सामने आ सकते है। यह गालोआ के जीवन से स्पष्ट हो गया है।

दृष्टि विषा यह नागिनी,
देखत विष चढ जाय।
जीवन काढे प्राण ले,
मरे नरक ले जाय।।

एतदर्थ प्रत्येक पहलू से पर स्त्री त्याज्य है।



यह है व्यसन युक्त जीवन का अन्त



कृतियाँ

* विद्यांजलि
* शिवमाला
* शाकाहार समाधान
* खुली किताब
* दहेज न सहेज
* तीर्थंकर ऋषभ का– अनन्य अवदान :
  –जीवन की संपूर्ण कलाएँ
* पुरुषार्थ की विजय
* शारदा स्तुतिरियम् (हिन्दी अनुवाद)
* पर्यूषण : आत्म प्रकाश की दीपमालिका
* पारस पुरुष
* मंगलाचरण
* व्यसनों के पार
* किसने मेरे ख्याल में दीपक जला दिया?
* मइंक लेहा चरिउ (मयंक लेखा चरित्र)
  अपभ्रंश से अनुदित (प्रकाशनाधीन)